हैदर अली

(जीवनी)

पं. रघुवरदयालु मिश्र

प्रकाशक
दक्षिण भारत हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
मद्रास

 1949 [दाम ०—८—०

दक्षिण भारत साहित्य-माला—पुष्प— २.

१—४—२६
५— नवंबर १०

हिन्दुस्तानी प्रचार प्रेस
त्यागरायनगर,
मद्रास १७

पाठकों से-

उत्तर भारत और दक्षिण भारत एक ही देश के दो खंड हैं। मगर दोनों के बीच भाषा की भिन्नता गहरी खाई बनी हुई है— जिसे दो सौ सालों की अंग्रेज़ी शिक्षा नहीं पाट सकी है. आज भी उत्तर का साधारण पढ़ा-लिखा आदमी दक्खिन के बारे में या दक्खिन का औसत शिक्षित व्यक्ति उत्तर के बारे में उतना नहीं जानता, जितना इंग्लैंड या अमेरिका के बारे में जानता है। हिन्दुस्तानी प्रचार का प्रधान उद्देश्य—एक भाषा के प्रचार द्वारा समन्वय पैदा कर उस खाई को पाटना है। वही सच्ची राष्ट्रीयता की ठोस नींव होगी। मगर यह काम महज़ भाषा प्रचार से होना संभव नहीं। इसके वास्ते साहित्यिक व सांस्कृतिक आदान-प्रदान अत्यावश्यक है। २५ सालों तक भाषा प्रचार करने के बाद 'सभा' ने यह कार्य अपने हाथ में लिया है। इसी उद्देश्य को सफल करने का यह छोटा प्रयास है।

—प्रकाशक

कैफ़ियत

किसी देश का इतिहास या किसी बड़े आदमी की जीवनी लिखना आसान काम नहीं है। हर बड़े आदमी की ज़िन्दगी—अगर वह लिखने लायक हो—ऐसे जद्दो ज़हद से गुजरती है कि उस पर एकराय होना नामुमकिन है; उसके ख़यालात भी कुछ ऐसे ऊँचे और गहरे होते हैं कि उनको ठीक-ठीक समझाना आसान नहीं होता; और उसके काम भी इतने महत्व के तथा दूरन्देशी भरे होते हैं कि मामूली आदमी उन पर रायज़नी करने में ग़लती किये बिना नहीं रह सकता। फिर, अगर वह आदमी राज-काज से ताल्लुक़ रखनेवाला हुआ तो कहना ही क्या? हैदर अली की ज़िन्दगी में तो और एक ख़ासियत थी। जब वह पैदा हुआ तब एक मामूली सिपाही का लड़का था; मगर ६२ साल के बाद जब मरा उस समय वह मैसूर का सर्वे-सर्वा, दक्खिन का प्यारा नेता, हिन्दुस्तान की उम्मीद और अंग्रज़ों के दिल का काँटा था। जब वह पैदा हुआ था तब सिर्फ़ उसके माँ-बाप और उनके चन्द दोस्तों ने ही खुशियाँ मनायी थीं; मगर मरने की खबर

सुनकर राजा और रंक, सिपाही और किसान—सब आँसू बहा रहे थे। ऐसे महापुरुष के बारे में कोई एक बात कहना ख़तरे से ख़ाली नहीं है।

हैदर अली के बारे में अलग अलग इतिहासकार अलग अलग फ़ैसला दे गये हैं। किसी ने उसे नेपोलियन की तरह बहादुर और दिलावर माना है तो किसी ने उसे लहू और लूट को पसन्द करनेवाला ख़ूँख़ार भेड़िया बताया है। ख़ासकर अंग्रेज़ इतिहास-कारों ने हैदर अली को बदनाम करने की बड़ी कोशिश की है। उनको हम यह कहकर माफ़ कर सकते हैं कि उनकी आँखों पर अपने स्वार्थ का चश्मा चढ़ा था, वैसा करने में ही उनका फ़ायदा था। हमें अचरज और रंज अपने उन हिन्दुस्तानी इतिहासकारों को देखकर होता है जो बिना कुछ सोचे-समझे, बिना जाँच-पड़ताल किये, उनकी बातों को वेद-वाक्य मानकर चले हैं। हमें उनकी ग़ुलाम मनोवृत्ति पर क्षोभ होता है।

मगर वह दिन अब दूर नहीं है जब कि हमारे इतिहास और ऐतिहासिक महापुरुषों के बारे में स्वार्थियों ने ग़ैरसमझी का जो कुहरा फैला रखा है वह छँट जायगा और उनके असली रूप हमें दीखने लगेंगे। ऐसे लेखकों ने अपनी लेखनी सम्हाली है। और उन्हीं लोगों ने यह लिखने की प्रेरणा हमको दी है।

इस बारे में हम उन लोगों से सहमत हैं—जो यह मानते हैं कि हैदर की नज़र बहुत दूर पर थी, उसका मक़सद बहुत ऊँचा था और उसका व्यक्तित्व बड़ा ज़बर्दस्त था। और जो यह मानते हैं कि हैदर के सारे काम सच्ची राष्ट्रीयता को मद्दे-नज़र रखकर होते थे, जो राज या अधिकार का प्यासा नहीं, बल्कि रिआया की ख़िदमत करने का भूखा था। उसी दृष्टिकोण को लेकर हमने यह किताब लिखी है।

पाठक इस जीवनी में, और जीवनियों से कुछ फ़र्क़ पायेंगे। इसमें हैदर के पैदा होने, मरने, लड़ने, जीतने, हारने, उसकी सन्धि की शर्तों की खोज करने वग़ैरह बातों का ज़्यादा ज़िक्र नहीं हुआ है। इसमें हमने हैदर अली की ज़िन्दगी के मक़सद को साफ़ करके बताने की कोशिश की है। उसके व्यक्तित्व का चित्र खींचने का, ईमानदारी से प्रयत्न किया है। हैदर के भीतर झाँकने का उद्योग किया है। इसमें हम कहाँ तक कामयाब हो सके हैं, यह तो पाठक ही बता सकेंगे। हाँ, इन चन्द सफ़ों में इससे ज़्यादा हम कुछ नहीं कर सके—यह सही है।

इस छोटी-सी किताब के लिखने में हमने कई इतिहासकारों, किताबों व अखबारों से मदद ली है। ख़ासकर मैसूर गज़ेटियर, प्रो. सत्यनाथन, विल्क्स, पं. सुन्दरलाल जी वग़ैरह लोगों के हम

कृतज्ञ हैं। पाठकों को अगर यह चीज़ पसन्द आयी तो हम अपनी मेहनत सफल मानेंगे।

फूल मन को लुभानेवाला, खूबसूरत और खुशबूदार हुआ करता है। दाना दस्तकार उसको गजरे में पिरोकर राजा रईसों और क़दरदानों के लायक़ वना देता है। उसी तरह छोटी सी किताब की बनावट और सजावट में भाई ब्रजनन्दन जी की मुझे भर-पूर मदद मिली है, उसके लिए मैं उनका तहेदिल से शुक्र—गुज़ार हूँ।

—लेखक

ये बनिये

'हवलदार !'

'हुज़ूर !'

'अंग्रेज़ क़िलेदार हाज़िर किया जाय।'

'सुलतान शाह का इक़बाल बुलन्द रहे !'

'तुम्हीं हो क़िलेदार ! तुम्हीं ने हमारी फ़ौज को परेशान किया था ? डाकुओं की तरह तुम्हीं लोग इधर घुस आये थे ?'

'नहीं शाह, गुस्ताखी माफ़ हो।'

'मैं तुम सरीखे निकम्मों और निहत्थों की जान लेना नहीं चाहता।'

'हैदरशाह का इक़बाल बुलन्द हो !'

'तुम लोगों ने कंपनी का सारा माल हाज़िर किया ?'

'जी हुज़ूर, जमा किया जा चुका है।'

'अब जो लोग मद्रास वापस जाना चाहें, जा सकते हैं।'

'नहीं हुज़ूर, ये अंग्रेज़ लोग बड़े दग़ाबाज़ हैं। इनको यों ही छोड़ देना ख़तरनाक है। बंगाल के नवाब

सिराजुद्दौला की फ़य्याजी का इन्होंने जो बदला दिया था—क्या हुज़ूर उसे भूल गये? बादशाह शाह आलम को ये लोग किस तरह नचा रहे हैं सो क्या जनाब नहीं जानते? सारी नवाबी और बादशाही को इन्होंने किस तरह कर दिया है!—ये किसी को न छोड़ेंगे। इन्हें माफ़ नहीं करना चाहिये हुज़ूर! ये सफ़ेद साँप हैं।'

'पूर्णय्या, तुम जोश में आकर इतनी बातें कह गये। तुम्हारे देश-प्रेम की मैं तारीफ़ करता हूँ। राजनीति भी यही कहती है। मगर आखिर ये इंसान हैं न? हमारे मुल्क की सभ्यता हमें दुश्मनों को भी माफ़ करना सिखाती है। विदेशी हैं, हमसे प्राणों की भीख माँग रहे हैं। क्या हिन्दुस्तानी होकर तुम ना कर दोगे?'

'हैदरशाह के हुक्म को बदलने की हिमाक़त कोई नहीं कर सकता। मगर हुज़ूर याद करें, चन्द रोज़ पहले इन्हीं अंग्रेजों ने धर्मपुरी के हमारे क़िलेदार और उसके बाल-बच्चों के साथ कैसा ज़ालिमाना सलूक किया था। हथियार डाल देने पर भी, सफ़ेद झंडा फहरा देने पर भी, औरतों, बच्चों समेत उसको किस बेरहमी से कत्ल कर दिया था! ओह, मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। क्या उस गुनाह से भी हुज़ूर इनको माफ़ कर देंगे?'

'ठीक कहते हो, पूर्णय्या! ये माफ़ी के हक़दार नहीं हैं। रसूलिल्लाह सल्लम मोहम्मद रसूल ने अपने उस दुश्मन को भी माफ़ कर दिया था, जिसने सोते वक़्त उन्हें खंजर भोंककर मारने का इरादा किया था। और फिर हमारे बाप-दादों ने भी तो हमें यही सिखाया है।......अगर ये लोग फिर बदमाशी करेंगे तो हैदर की बाजुओं में भी ताक़त है। अपनी ईमानदारी और ताक़त के भरोसे इन्हें छोड़ दो पूर्णय्या।'

'अच्छा हुज़ूर'

'हाँ, ये लोग कोई भी हथियार या लड़ाई का सामान वग़ैरह साथ नहीं ले जाने पायें। और हमें इतमीनान दिलायें कि फिर ऐसी गुस्ताखी नहीं करेंगे।

'हम इंजील लेकर क़सम खाते हैं कि आयन्दा हैदरशाह के इलाक़े में दस्तन्दाज़ी नहीं करेंगे और न उनके खिलाफ़ हथियार ही उठाने की गुस्ताखी करेंगे।'

'अब तुम लोग जा सकते हो।'

'मगर सुलतान...'

'मैं समझ गया। तुम लोगों के साथ हमारा क़ासिद जायगा। वह तुम लोगों को बा-हिफ़ाज़त तुम्हारे

इलाक़े तक पहुँचा आयगा। हिन्दुस्तानी शरण में आये हुओं को नहीं सताते। जाओ।'

'सुलतान की जय!' कहकर सारे गोरे सिपाही जाने लगते हैं। मगर क़िलेदार खड़ा का खड़ा ही रह जाता है—सिर झुकाये।

'क्या है? तुम खड़े हो! कुछ कहना है?'

'हुज़ूर' मैं यहाँ का क़िलेदार था।'

'सो तो जानता हूँ।...और कुछ?'

'क़िले के अन्दर जो रसद का सामान है उसे मैंने अपने निज के रुपये से ख़रीदा था।'

'क्या? ख़रीदा था?—और सो भी निज के पैसे से? तुम लोग तो अपनी लूट-मार के लिए मशहूर हो। तुमको तो तुम्हारे फ़रासीसी भाई समुद्री डाकू कहते हैं। यह रसद तुमने लूट कर इकट्ठा नहीं की है? हमारी ग़रीब रिआया के मुँह का छीनकर जमा नहीं किया है? मुझे इतमीनान नहीं होता।'

'हुज़ूर, अब मैं क्या गुज़ारिश करूँ? सच्चाई किस तरह साबित करूँ? मगर ख़ुदा को हाज़िर-नाज़िर मानकर इतना कहता हूँ कि यह ख़रीदा हुआ सामान है। यहाँ आये हमें अभी कितने दिन हुए? उसके अलावा यहाँ के

लोग हमसे नाखुश हैं। उनको सताते तो हमारा यहाँ टिकना भी मुहाल हो जाता।'

'हूँ'

'हुज़ूर, मैंने ज़रूर यह उम्मीद की थी कि यह रक़म लोगों से राज़ी-बाज़ी हो जाने पर वसूल कर ली जायगी। पर उसका मौक़ा ही कहाँ मिला!'

'पीछे वसूल करना चाहते थे? और अब हमसे लेना चाहते हो? आख़िर बनिये हो न? अपनी कौड़ी छोड़ नहीं सकते।'

'हुज़ूर, मैं ग़रीब हूँ। कंपनी मुझे वह रक़म नहीं देगी।'

'सो तो ठीक है। कंपनी वह क्यों देने लगी? कंपनी का तुमने नमक खाया है।' तुमको यहाँ से ज़िन्दा वापस नहीं जाना चाहिए था। ख़ैर, यह मेरा काम नहीं।—कितने का होगा तुम्हारा माल?'

'हुज़ूर, चार हज़ार का।'

'पूर्णय्या, चार हज़ार रुपये क़िलेदार को ख़ज़ाने से दिलवा दो। मगर उसके पहले सब सामान की जाँच कर लेना। सब की फ़ेहरिश्त मेरे सामने पेश करना।'

माँ का लाल

'हुज़ूर, सिपहसालार फ़ज़लुल्लाह ख़ाँ हुज़ूर की खिदमत में हाज़िर हैं।'

'अच्छा, बुलाओ।'

'हुज़ूर की ख़िदमत में आदाब अर्ज़!'

'ख़ाँ साहब, क्या ख़बर है?'

'हुज़ूर, ख़बर बड़ी मज़ेदार है। यह अंग्रेज़ आये थे हिन्दुस्तान में तिजारत करने और हिमाक़त कर रहे हैं हुकूमत कायम करने की। लेकिन बुज़दिल इतने हैं कि कहीं लड़कों ने एक पटाख़ा भी छोड़ दिया तो दुम दबाकर भागते नज़र आते हैं।'

'ख़ाँ साहब, दीबाचा लम्बा हो रहा है, असल बात क्या है?'

'हुज़ूर, आपने साहबज़ादे फतेअली टीपू साहब को मद्रास की तरफ़ भेजा था न?'

'सो क्या हुआ? भाग तो नहीं आया?'

'ऐसा भी कहीं हो सकता है! शेर का बच्चा शेर ही होता है। ज्यों ही ख़बर पहुँची कि टीपूशाह की फ़ौज आ

रही है, बस, मद्रास के गर्वनर बहादुर अपनी टोपी और तलवार का बोझ एक मज़बूत आम के दरख्त के सुपुर्द कर समुद्र में जा छिपे।'

'क्या? समुद्र में?............बेचारा.........'

'नहीं हुज़ूर, डूबा नहीं। समुद्र में जहाज़ खड़ा था। उसी में जा छिपा। और उसके अज़ीज़ मोहम्मद अली साहब—जिनके लिए यह 'बारह महल' जीतने आये थे—दस्तरख़ान छोड़कर घोड़े की रिकाब पर ही नज़र आये।'

'हाँ, खाँ साहब, आपने अच्छे मौक़े पर मोहम्मद अली की बात कही। क्या निज़ाम की भी कोई ख़बर मिली है? बुलवाओ तो कृष्णराव को।'

'आदाब अर्ज़ है हुज़ूर। बन्दा ख़िदमत में हाज़िर हो ही रहा था। हुकुम हुज़ूर।'

'मैं जानना चाहता हूँ कि निज़ाम की फ़ौज़ जो हमारी मदद के लिए सिपहसालार रुक़नुद्दौला की मातहती में हैदराबाद से निकली थी, वह कहाँ है? उसकी कोई ख़बर है?'

'हुज़ूर' अभी अभी ख़बर आयी है कि उन्होंने हमारे साथ दग़ा किया।'

'दग़ा ? मुझे इतमीनान नहीं होता, कृष्णराव।'

'मगर यह बात सच है हुज़ूर। रुक्नुद्दौला ने 'अंग्रेज़ों से भारी रिश्वत ली और तिरुवण्णामलै के मैदान में हमारी फ़ौज और अंग्रेज़ी फ़ौज के बीच अपनी फ़ौज इस ढंग से लगा दी मानों अंग्रेज़ों पर हमला करने जा रहे हों। मगर ऐन मौक़े पर फ़ौज को इस ढंग से पीछे भगाया कि अगर हमारे सिपाही व सिपहसालार जवाँमर्दी और दानाई से काम न लेते तो वे भी भाग खड़े होते और अंग्रेज़ आसानी से क़त्ले-आम कर डालते। ख़ुदा के फ़ज़ल से उनकी सारी हिक़मत बेकार गयी।'

'हूँ, मैं देख रहा हूँ इस मुल्क की बदनसीबी को, जहाँ रुक्नुद्दौला जैसे ख़ुदगर्ज़ लोग बागडोर सम्हालनेवाले हों उस देश को ख़ुदा भी नहीं बचा सकता। मगर नहीं, हैदर के दम में दम रहते ऐसा नहीं हो सकता। मैं इन देश के दुश्मनों के पैर यहाँ जमने न दूँगा। हिन्दुस्तान की उन सारी ताक़तों को इकट्ठा करना होगा जो इस मुल्क की शान व इज़्ज़त बचाने के लिए अपना सब कुछ कुर्बान करने को तैयार हों। अच्छा कृष्णराव, ज़रा पूर्णय्या, फ़ज़लुल्लाह ख़ाँ वग़ैरह इतमीनान के लोगों को बुलाओ तो। कुछ मशविरा करना है।'

* * * *

शाम के वक़्त की सुनहरी किरनें पहाड़ों पर चढ़ चुकी हैं। चिड़ियाँ चहचहा कर दुनियाँ से आज का काम-काज बन्द करने की आरज़ू कर रही हैं। कावेरीपट्टणम क़िले के अन्दर बड़ा-सा शामियाना खड़ा है। शामियाने के नीचे हैदरअली शाह मसनद पर बैठे हुए हैं। मसनद पर लाल रंग की रेशमी चादर पड़ी हुई है। हैदर शाह का बदन गठीला और क़द मझोला है। रंग साँवला और चेहरा दमकता हुआ है। सिर पर लाल रंग का बड़ा साफ़ा है— जिस पर कलंगी बंधी हुई है। रोब चेहरे से टपक रहा है। अग़ल-बग़ल में शरीर-रक्षक और दीवान पूर्णय्या, कारगुज़ार कृष्णराव और सिपहसालार फ़ज़लुल्लाह खाँ वग़ैरह बैठे हुए हैं। हैदरशाह की आवाज़ इतनी साफ़ और कड़ाके की है कि सुनकर शेर भी एक बार सहम जाय। रिपोर्ट पर रिपोर्ट सुनायी जा रही है। चिट्ठियाँ लिखायी जा रही हैं। जासूस अपना बयान सुना रहे हैं। हर कागज़ पर फ़ारसी का उल्टा 'हे' लिखकर शाह अपने दस्तख़त करते जा रहे हैं। मानों मशीन चल रही हो। दरबार में गंभीरता छायी हुई है।

इतने में सभी लोग भड़भड़ा कर उठ खड़े होते हैं। सबके सिर झुक जाते हैं। आदत के मुआफ़िक हाथ बंदगी के लिए उठते हैं। हैदरशाह भी एकाएक उधर देखते हैं।

वह भी चुप-चाप उठकर एक तरफ़ खड़े हो जाते हैं। सारी रविशें जगह दे देती हैं।

एक अस्सी साल की बूढ़ी, मगर शेरनी का दिल रखनेवाली दरबार के बीच में आकर खड़ी होती है और फ़ुर्ती से सवाल करती है—

'बेटा हैदर, मैंने जो सुना है सो सच है क्या ?'

'क्या हुक्म है माँ ?'

'मैंने सुना है कि तुम इन लाल मुँहवाले फ़िरंगियों से डर गये हो ? तुम्हारी हार हुई है ? तुमने डरकर टीपू को भी मद्रास से बुला लिया है और ख़ुद भी मैसूर वापस जाना चाहते हो। क्या यह सच है ?'

बड़े ज़ोर से हँसकर, 'तो माँ, क्या इसीलिए घबराकर हैदरनगर से इतनी दूर, बरसात के मौसम में, मुझे भागने से रोकने आयी हो ? माँ, तुम्हें इस ख़बर पर इतमीनान हो गया ? क्या तुम्हें अपने दूध पर विश्वास नहीं हुआ ? क्या शेरनी कभी सियार भी जनती है ? शेर कभी घास खाता है ? नहीं। तो फिर हैदर की हार भी ग़ैर-मुमकिन है।—और माँ, यह तो लड़ाइयाँ हैं। आगे-पीछे हटना तो दाँव-पेंच है। तुम इतने से घबरा गयी माँ ?'

'नहीं बेटा, मुझे मालूम है कि तुम मेरे दूध की लाज रखोगे। मैं देखने आयी थी कि इन छोटी-मोटी हारों से तुम्हारा दिल कच्चा तो नहीं पड़ गया। बस, अब मैं लौट जाऊँगी। यहाँ रहकर तुम्हारे काम में रुकावट नहीं डालूँगी।'

'कोई रुकावट नहीं माँ। तुम ख़ुशी से ठहरो और देखो कि किस तरह ये गीदड़ मैदान छोड़कर भागते हैं। अभी 'वानियम्बाड़ी' और 'आम्बूर' जीते जा चुके हैं। तुम्हारे फ़जल से माँ, तुम्हारा शेर नीचा नहीं देखेगा।'

'तसल्ली हुई बेटा। तुम बेफ़िक्र होकर लड़ो। अल्लाह तुम्हारी मदद करे।'

वह ज़माना

यह कहानी उस ज़माने की है कि जब हिन्दुस्तान एक बड़ी भारी उथल-पुथल से होकर गुज़र रहा था। महान मुग़ल बादशाहों की हुकूमत ख़तम हो रही थी। हिन्दुस्तान के लोग उस बात को भूलने लगे थे कि इस ज़रखेज़ धरती पर जो आया, वह ग़ैर नहीं समझा गया। आर्यों के पहले कौन आये, पता नहीं। मगर उनके

बाद हूण आये, सीथियन आये, यहूदी आये, पारसी आये और आये मुसलमान। हिन्दुस्तान की प्रजा ने राजा ने, पुजारी ने और सन्त ने, सभी को एक ही ईश्वर की औलाद समझा। सब को अपने समान समझा। सबों को जगह दी। सबों को अपनी बाहों में समेट लिया। सच्ची धार्मिकता और उदार-भावना हिन्दुस्तानियों की हमेशा से खासियत रही है। फिर कोई फ़कीर हो या पादरी, सन्त हो या औलिया—हिन्दुस्तानियों के दिल का दरवाज़ा खुला हुआ था।

इसलाम यहाँ हुकूमत करनेवालों का मज़हब बनकर नहीं आया। अरबवाले इसलाम की पैदाइश के बहुत पहले से हिन्दुस्तान से तिजारत करते थे। हिन्दुस्तानी भी अरब आया-जाया करते थे। हिन्दुस्तान के बन्दरगाहों के आस-पास अरबवालों की और अरब के बन्दरगाहों के आस-पास हिन्दुस्तानी लोगों की बस्तियाँ बस गयी थीं। उनमें गहरा मेल-जोल था। इसलाम के जन्म के बाद उन सौदागरों के साथ उनके पीर-औलिया भी यहाँ आने लगे। उनकी धार्मिक-भावना, चरित्र-बल और आध्यात्मिक शक्ति का इस देश पर गहरा असर पड़ा। फल यह हुआ कि हिन्दू भी ख़ुशी-ख़ुशी उनसे सांस्कृतिक आदान-प्रदान करने लगे।

हिन्दुस्तान की कला, साहित्य, चित्रकारी, धार्मिक भावना व विचार-धारा पर अरबवालों का ऐसा गहरा असर पड़ा कि बाद की संकीर्णता भी उसे मिटा न सकी। आज हमारी सभ्यता का जो बाहरी रूप है वह इन दो महान धर्मों और सभ्यताओं का गंगा-जमुनी संस्करण है।

मगर अफ़सोस, जिस धार्मिक सहिष्णुता, समभावना और भ्रातृभाव को इन दो महान धर्मों के अनुयायियों ने पन्द्रहवीं सदी तक बनाया; उसके बाद बाबर, शेरशाह, अकबर आदि ने १६ वीं व १७ वीं सदी में जिसकी परवरिश की और कबीर, नानक, दादू वग़ैरह ने जिसको गहरा और दृढ़ बनाया; औरंगज़ेब जैसे लोगों की अदूरदर्शिता, धर्मान्धता और संकीर्णता ने उस भाईचारे पर कुल्हाड़ी चला दी। फिर हज़ार कोशिश करने पर भी उस भावना को ज़िन्दा रखना मुश्किल हो गया। उधर मराठे, राजपूत और सिक्खों ने भी अपनी दृष्टि संकीर्ण बना ली। बस, द्वेष की आग धधक उठी। अविश्वास का बोलबाला हुआ। स्वार्थ-परता हद तक पहुँच गयी। सूबे के बाद सूबे आज़ादी का ऐलान करने लगे। हिन्दू हो या मुसलमान—मुगल बादशाह उसके लिए नाचीज़ हो गया है। बंधी हुई बढ़नी खुल गयी। सींकें बिखर गयीं। दुश्मनों

क़ो खुलकर खेलने का मौक़ा मिला। इन करतूतों में अगुआ हुए बादशाह के दक्खिन के सूबेदार।

दिया जब गुल होने लगता है तो एक बार ज़ोर से जल उठता है। मरीज़ दम तोड़ने के पहले एक बार अच्छा होने के चिन्ह प्रगट करता है। हिन्दुस्तान की आज़ादी जब सदा के लिए ख़तम होने को थी, उसके अन्दर घरेलू फूट के कीड़े जड़ तक पहुँच चुके थे, तब की यह कहानी है। १८ वीं सदी की बात है। हिन्दुस्तान को एक धागे में बाँधकर उसे बचा लेने की कोशिश जिन महापुरुषों ने की, उनमें दो नाम बहुत मशहूर हैं—हैदर अली और नाना फड़नबीस। एक शरीर था तो दूसरा प्राण। वे दोनों एक दूसरे के पूरक थे। उन दोनों की ताक़तें अगर इकट्ठी हो पातीं, एक होकर काम करतीं, तो हिन्दुस्तान की तवारीख़ आज की-सी न होती। उसके पन्नों में और ही कुछ लिखा होता।

बाप-दादे

हैदर अली का जन्म किसी राजघराने में नहीं हुआ था। उसका परदादा वली मोहम्मद एक मामूली मुसलमान फ़क़ीर था। वह गुलबर्गा के दरगाह में रहता

था। उस ज़माने के मुसलमान फ़कीर भी हिन्दू सन्तों की तरह बहुत ही सरल जीवन बिताते थे। इन वली मुहम्मद के लड़के शेख़ मुहम्मद भी एक पहुँचे हुए फ़कीर हुए। शेख़ मुहम्मद के चार बेटे थे। जब बेटे बड़े हुए और खर्च-वर्च की तंगी हुई तो बेटों ने बाप से कहा कि हमें कहीं नौकरी करने की इजाज़त दीजिये। फ़कीराना मिजाज़ शेख़ मुहम्मद ने लड़कों को समझाया और कहा कि हमारे ख़ानदान में ऐसा कभी नहीं हुआ। हमारे बुजुर्ग खुदातर्स, परहेज़गार लोग थे। वे जानते थे कि दुनियावी चीज़ों के पीछे दौड़ने से मन की शांति जाती रहती है। इसलिए इस चन्दरोज़ा ज़िन्दगी के लिए अपनी पाकीज़गी को बरबाद न करो। जब तक शेख़ मोहम्मद ज़िन्दा रहे, बेटों ने उनका साथ दिया; मगर उनके आँखें मूँदते ही उन का दूसरा बेटा फतेह मोहम्मद नौकरी की तलाश में आर्काट के नवाब के यहाँ पहुँचा। वहाँ नवाब की फौज में शामिल हो गया। उसने तंजौर के एक नामी फ़कीर पीरज़ादा बुरहानुद्दीन की लड़की से शादी की।

इन्हीं दो फ़कीर ख़ानदान की महान-आत्माओं से शाहबाज़ और हैदर अली का जन्म हुआ। हैदर १७२० ई० में पैदा हुआ। उस समय हिन्दू-मुसलमानों का

सामाजिक जीवन एक दूसरे में इतना गुंथा हुआ था कि आज उसको देखकर अचरज होता है। हैदर के जन्म के दिन फ़तेह मोहम्मद के दोस्त हिन्दू ज्योतिषियों ने बच्चे की एक जन्म-पत्री बनायी। सिंहराशि में बच्चे का जन्म हुआ था, इसलिए उसका नाम हैदर (सिंह) रखा गया। ज्योतिषियों ने यह भी कहा कि यह लड़का एक दिन सिंहासन पर बैठेगा। बाप फ़तेह मोहम्मद—जो मामूली-सा सिपाही था – हँसा।

फ़क़ीर ख़ानदान का लड़का तख़्त पर बैठे! कैसी पेशीनगोई! कहा होता कि किसी फ़कीर की गद्दी पर बैठेगा तो यक़ीन भी आता। मगर जब हैदर तख़्तनशीन हुआ तो उसका बाप या वे ज्योतिषी ज़िन्दा न थे जो देख पाते।

जब दक्खिन में यह पेशीनगोई हो रही थी तब उत्तर में दिल्ली की बादशाहत अपने कमज़ोर पैरों पर लड़खड़ा रही थी। मुग़ल ख़ानदान के ख़ैरख़्वाह और दाना वकील हसन अली और उनके भाई को निज़ामुलमुल्क ने क़त्ल करवा दिया था। और कठपुतली बादशाह मुहम्मदशाह से अपने लिए दक्खिन की सूबेदारी ले ली थी।

पूना में पेशवा की गद्दी पर बाजीराव था। वह मराठा-साम्राज्य बढ़ाने में लगा हुआ था। उत्तर में दिल्ली, पूरब में इलाहाबाद और पश्चिम में गुजरात तक उसने अपना पाँव फैलाया। निज़ाम को पेशवाओं की यह बढ़ती खटक रही थी। वह कहीं न कहीं उन्हें नीचा दिखाना चाहता था। कभी किसी को उभाड़ देता, कभी खुद ही थोड़ी फ़ौज लेकर चढ़ दौड़ता।

निज़ामुलमुल्क आसफ़शाह और बादशाह मुहम्मद शाह के दरबारी लोगों ने नादिरशाह को बुलाया। दिल्ली लुटी, और बुरी तरह लुटी। मुग़ल बादशाहत को क़रारी चोट पहुँची और वह फिर उठ न सकी। बंगाल, बिहार और उड़ीसा का सूबा, जो मुग़ल-सल्तनत का एक ज़बर्दस्त पाया था, इस वक्त ज़फ़र खाँ की सूबेदारी में अलग होने की सोचने लगा था और अलीवर्दी खाँ के ज़माने में पूरा पूरा अलग हो गया था। रुहेले और पठानों ने अपनी नयी रियासतें क़ायम कर ली थीं।

सिपाही से "दैव"

हैदर अली अभी सात साल का नन्हा बच्चा था जब फ़तेह मुहम्मद की मौत हो गयी। हैदर के ऊपर

तकलीफ़ों के पहाड़ टूट पड़े। तभी से वह नादान लड़का आफ़तों से लड़कर रास्ता बनाना सीखने लगा।

कभी किसी ने हैदर को अपने बड़े भाई शहबाज़ की मातहती में हैदराबाद निज़ाम के वारिस मुज़फ़्फ़रजंग की ओर से मैसूर की फ़ौज़ में लड़ते देखा, तो कभी मामूली हवलदार की हैसियत से 'दिंडिगल' के पास यूसुफ़ खाँ से अकेले टक्कर लेते देखा। दिंडिगल की लड़ाई में उसने जो बहादुरी और युद्ध-चातुरी दिखायी उसकी धूम मच गयी। मैसूर के दीवान नंजराजा ने ख़ुश होकर उसे दिंडिगल का फ़ौजदार बना दिया। हैदर ने यूसुफ़ खाँ से लड़ते हुए देखा कि हिन्दुस्तानी सिपाहियों की बनिस्बत यूरोपियन सिपाहियों की व्यवस्था, क़वायद, लड़ने का ढंग और लड़ाई के साधन भी ऊँचे दर्जे के हैं। उसने उससे फ़ायदा उठाने का निश्चय किया और उस निश्चय को अमल में भी ले आया।

मैसूर रियासत मराठों को चौथ दिया करती थी। लेकिन और बातों में वह आज़ाद थी। मगर मराठे मैसूर की इस कमज़ोरी से फ़ायदा उठाते थे। जब चाहते चढ़ दौड़ते और परदा-नशीन राजा को दबाकर हक़ से ज़्यादा रुपया वसूल कर ले जाते। कभी उनकी रियासत का कोई

हिस्सा दबा बैठते तो कभी मैसूर दरबार में कोई साजिश ही खड़ी कर देते और उससे फ़ायदा उठाते। क्योंकि मैसूर के राजा राज-काज नहीं देखते थे, पूजा-पाठ में लगे रहते थे। सारा काम वज़ीरों पर छोड़ रखा था। उनमें "दैव" (वज़ीरे-आज़म) ही एक तरह से सर्वाधिकारी होता था। हैदर ने देखा कि वहाँ एक धाँधली और अव्यवस्था चल रही है जो रियासत के वास्ते खतरे की जगह है। इसी समय एक मराठा ब्राह्मण खांडेराव—जो नंजराजा दैव को क़ैद कर खुद दैव बन गया था—मराठों को मैसूर पर चढ़ा लाया। हैदर से यह बर्दाश्त न हुआ। उसने मराठों को हराकर खांडेराव को भी क़ैद कर लिया और खुद दैव बन गया।

हैदर अली की शोहरत दिल्ली पहुँची और दिल्ली के बादशाह ने उसे मैसूर के पास 'सिरा' प्रान्त का सूबेदार नियुक्त किया।

मैसूर राज्य की बागडोर हाथ में लेते ही उसने राज्य की अन्दरूनी कमज़ोरियों की ओर तवज्जह दी। सब से पहले उसने खज़ाने की बिगड़ी हालत को सुधारना चाहा। साहूकारों ने झूठे और जाली हिसाब बनाकर रियासत पर

क़र्ज़ा चढ़ा रखा था। हैदर अली ने पंच मुकर्रर कर उन क़र्ज़ों की जाँच करवायी और जालसाज़ साहूकारों को कड़ी से कड़ी सज़ा दी। रियासत की सारी रक़म वापस ले ली।

रियासत के अन्दर छोटे छोटे रियासतदार, जिन्हें 'पाळैगार' कहते थे, आपस में लड़ते थे और अपने को रियासत से आज़ाद समझने लगे थे। हैदर अली ने उनकी ओर निगाह फेरी, फ़ौजें भेजकर उन्हें दबाया और फिर दबदबा, व्यवस्था और शांति स्थापित की। इसी सिलसिले में बेदनूर सरीखे धनवान इलाक़े के पालीगार ने हैदर को गुप्त रूप से मरवा डालने की साजिश की। मगर वह क़ैद किया गया और उसकी जगह दूसरा पालीगार नियुक्त हुआ। उसके ख़ज़ाने से मैसूर दरबार को १२ करोड़ रुपये मिले। बेदनूर को बदलकर 'हैदर नगर' कर दिया गया और हैदर ने उसे अपने रहने के वास्ते पसन्द किया।

इस तरह उसने मैसूर राज्य के अन्दर की गड़बड़ियों और ख़राबियों को ठीक करके बाहर निगाह डाली।

अंग्रेज़ी नीति

हैदर पढ़ा-लिखा न था। दस्तख़त भी उल्टा 'हे' खींच कर करना ही जानता था। मगर राजनीति और

युद्ध में बड़ा होशियार था। उसने सारी रियासत में गुप्तचरों का संगठन कर रखा था। मराठों के दरबार में उसका वकील रहता था। इन सब के ज़रिये वह सारे हिन्दुस्तान की हर घड़ी की हालत से वाक़फ़ियत रखता था।

उसने देखा कि जो अंग्रेज़ जहांगीर के ज़माने में तिजारत करने के वास्ते हिन्दुस्तानियों की मेहरबानियों के लिए हाथ पसारे हुए सूरत के बन्दरगाह पर उतरे थे, वे आज (१६०८ से १७६१) डेढ़ सौ बरस के अन्दर इतने हावी हो रहे हैं कि सारी हिन्दुस्तानी सल्तनतों को ख़तरा हो गया है। बंगाल में अलीवर्दी ख़ाँ के ख़ानदान के लोगों में ख़ुदग़र्ज़ी और दग़ाबाज़ी का बीज बोकर, एक को दूसरे से लड़ाकर तबाह कर दिया। सिराजुद्दौला सरीखे नेक नवाब के ख़िलाफ़ उसके वज़ीर मीरजाफ़र को खड़ा कर दिया। मीरज़ाफ़र के ख़िलाफ़ उसके दामाद मीरक़ासिम को लड़ा दिया। मीरक़ासिम-सा नेक और बहादुर सिपाही होना दुश्वार है। वह भी इनके चकमे में आ गया।

हिन्दुस्तान की हुकूमत के अन्दर मुसलमानों ने कभी कोई फ़र्क़ नहीं रखा था। लेकिन आज इन लोगों के हाथों में पड़कर मुसलमान नवाब और हाकिम अपने हिन्दू

वफ़ादार भाइयों, नायबों और जागीरदारों को सताते हैं, लूटते हैं, क़त्ल करवाते हैं। इस मुल्क के शक्तिशाली राजा और नवाब इन मुट्ठी भर लोगों से थर थर काँपते हैं— उनकी उंगलियों के इशारे पर नाचते हैं। कैसी हिमाक़त है कि बादशाह शाहआलम भी इनके चंगुल में फँस गया।

यह भी दुख की बात है कि हैदराबाद के निज़ाम और कर्नाटक के नवाब मोहम्मद अली को ये लोग मैसूर के खिलाफ़ खड़ा कर रहे हैं। उधर राघोबा से मिलकर मराठों और मैसूर के बीच साजिशें कर रहे हैं। मगर यह भी नहीं चाहते कि मराठों की ताक़त बढ़े। उनके घर में फ़ूट डालकर उनका भी नाश करना चाहते हैं। वहाँ कुछ उम्मीद है तो नाना फड़नवीस से।

इस तरह हैदर हिन्दुस्तान के सारे राजनीतिक मसलों पर अपनी निगाह डालकर देख रहा था कि ये फिरंगी "फ़ूट डालकर राज" करने की नीति को अख़्तियार कर रहे हैं और उनकी यह नीति बड़ी कामयाब हो रही है। इसलिए हैदर अपनी ताक़त को मज़बूत कर लेना चाहता था, जिससे वह इनको हिन्दुस्तान से सदा के लिए बाहर कर सके। वह भविष्य को देख रहा था और समझ रहा था कि अभी अगर इसका उपाय न किया गया तो फिर ये फिरंगी सारे

हिन्दुस्तान को अपने पैरों तले दबाकर बैठ जाएँगे और इनसे देश का गला छुड़ाना असंभव हो जाएगा।

कौन कह सकता है कि उसका सोचना ग़लत था।

मुल्की इन्तज़ाम

मैसूर की प्रजा हिन्दू थी। राजघराना हिन्दू था। वहाँ हैदर—एक मुसलमान—मामूली सिपाही की हैसियत से बढ़ता हुआ ऊँचे से ऊँचे पद पर पहुँचा। 'दैव' बना। राजा के बाद सब से बड़ा अफ़सर बना। अधिकार तो उस के राजा से बढ़े-चढ़े थे। इतना होने पर भी धार्मिक या क़ौमी घमण्ड या पक्षपात उसे छू तक न गया था। ऊँचे-से ऊँचे ओहदे वह योग्यता को ध्यान में रखकर लोगों को देता था। उसके दो विश्वासी मन्त्री पूर्णय्या और कृष्ण राव हिन्दू थे।

हैदर को अपने मुल्क के व्यापार और काश्तकारी का पूरा ख़्याल था। उसने अपने पूरे राज्य में पैमाइश करायी और नये सिरे से ज़मीन का बन्दोबस्त किया, जिससे पालीगारों की धांधली रुक गयी और रैयत सुखी हुई। वह यह भी समझता था कि कृषि प्रधान-देश हिन्दुस्तान के लिए गाय-बैल वग़ैरह जानवर कितने ज़रूरी हैं। इसलिए उसने

भी अकबर बादशाह की तरह गोकुशी क़तई बन्द करवा दी थी। इतना ही नहीं, बल्कि गोकुशी के लिए प्राणदण्ड तक की सज़ा दी जाती थी। टीपू भी उसी के चरण चिह्नों पर चला था। कावेरी के ऊपर उसने ही बाँध की नींव डाली थी। मगर उसे वह, पूरा कर न सका। उसी नींव पर आज का 'कृष्ण सागर नाम का विशाल डैम बना है, जिससे मैसूर रियासत के अन्दर हज़ारों एकड़ ज़मीन सींची जाती है।

हैदर खुद जानवरों का बड़ा शौक़ीन था। उसकी (राज्य की) गोशाला में चार लाख गायें और बैल थे। घुड़सवारी उसके शौक़ की चीज़ थी। घोड़ों का वह अच्छा पारखी था। उसके अस्तबल में अच्छे चुने हुए ग्यारह हज़ार घोड़े थे। घोड़ों की वह बड़ी हाट लगवाता, जिसमें दूर दूर के सौदागर घोड़े बेचने के वास्ते आते थे। किसी का घोड़ा रियासत के अन्दर मर जाय तो उसकी पूंछ दाखिल करने पर आधी क़ीमत दिलवा देता था।

वह हाथ की बनी चीज़ों की बड़ी क़दर करता था; जिससे रियासत के उद्योग-धंधों की बढ़ती हो। कपड़े का व्यापार मैसूर रियासत में उन दिनों अपना ख़ास स्थान रखता था। कहा जाता है कि सिर्फ़ कोयम्बत्तूर के बाज़ार

में ही हर हफ़्ते बीस हज़ार थान रेशमी कपड़े के—बिकने आते थे।

हैदर को शिकार का ख़ास शौक़ था। शेर का शिकार उसका मामूली खेल था। उसके यहाँ बहुत से शेर पले हुए थे जो रोज़ सुबह खुले हुए उसके सामने लाए जाते थे और वह उन्हें अपने हाथ से खिलाता था। वह अचूक निशानेबाज़ था। अखाड़ों में वह अक्सर शेर और सिपाहियों की कुश्ती करवाता था। अगर कोई सिपाही शेर को पछाड़ देता तो उसे इनाम दिया जाता। पर कहीं सिपाही शेर के नीचे दब जाता और शेर की निगाह बदली नज़र आती तो हैदर दूर बैठा बैठा शेर की कनपटी पर गोली मार देता और सिपाही बचा लिया जाता।

मराठों के पास समुद्री सेना ज़बर्दस्त थी। मगर यूरोपीय तिजारतियों ने उसका खातमा कर डाला था। हैदर ने देखा कि इन फ़िरंगियों की ताक़त समुद्री फ़ौज और जहाज़ी बेड़े हैं। उनसे भिड़ने के वास्ते यह भी ज़रूरी है। हैदर ने एक ज़बरदस्त बेड़ा तैयार कराया और रज़ा अली नाम के आदमी को उसका नायक मुक़र्रर किया। रज़ा अली ने लकद्वीप, मालद्वीप वग़ैरह क़रीब सौ टापू जीतकर हैदर के मातहत कर दिये थे। इससे भी अंग्रेज़ लोग

घबराये और हैदर के खिलाफ़ साजिशें करने लगे ; क्योंकि हैदर अली अगर दक्खिन में उनका पैर उखाड़ दे तो फिर मुगल बादशाह और मराठों को मिलाकर बंगाल में भी उनकी जड़ खोद सकता है।

यह सब किसलिए ?

हैदर की रण नीति भी अजीब थी। वह सेना के साथ बड़ी तेज़ी से धावे किया करता था। आज यहाँ-तो कल कहीं बीसियों मील दूर ; और दुश्मन परेशान। वह सामने होकर कम लड़ता था। दुश्मनों को बहकाकर इतना दौड़ाता कि उनकी फ़ौज दौड़ते-दौड़ते और रसद पानी न मिलने से ही मर जाती। लड़ाई के मैदान में मुश्किल से मुश्किल परिस्थिति में भी परेशान नहीं होता। कितने ही मौके ऐसे आये कि वह अपनी थोड़ी-सी फ़ौज की मदद से बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ा और सब को छका दिया। निज़ाम, मुहम्मद अली, अंग्रेज़ों तथा मराठों की विशाल सेना को इसी तरह चकमा देकर हरा देने की घटना तो कई बार घटित हुई।

वह आदमी की ज़बर्दस्त पहचान रखता था। किसी को एक बार देख लेता तो फिर कभी न भूलता। यही नहीं, चेहरा देखकर ही उसके गुण-दोष भी समझ लेता। इसी तरह

उसने पूर्णय्या, कृष्णराव, फज़लुल्लाह खाँ, मखदूम अली और रज़ा अली जैसे लोगों को चुना था।

पढ़ा-लिखा तो वह नहीं ही था। मगर उसकी याद्दाश्त बड़ी ज़बरदस्त थी। सैकड़ों खतों को सुन लेता और उनका जवाब लिखवा देता। सवेरे वह हाथ-मुँह धोने बैठता और उसके पचीसों जासूस आकर अपनी-अपनी रिपोर्ट सुनाया करते। आवाज़ से वह उन्हें पहचान लेता कि किसने क्या कहा। फिर उनको जवाब या आज्ञा देता।

इन्हीं गुणों की वजह हैदर मैसूर रियासत की इतनी तरक्की कर सका। १७६१ ई. में जब वह 'दैव' बना था—मैसूर की हालत बहुत बुरी थी। भीतरी और बाहरी शत्रु उस पर दाँत लगाये बैठे थे। राज्य लड़खड़ा रहा था। हैदर ने अपनी अक्ल और तलवार के ज़ोर से सब ठीक कर दिया। इतना ही नहीं, मैसूर राज्य की सीमा में पाण्डुचेरी और कडलोर, माही और मंगलोर के बन्दरगाह भी शामिल कर लिये थे। सारा कोरोमण्डल का किनारा उसका था और मदुरा, तंजौर उसकी हद में आ गये थे। कोचिन व कालीकट के नायर राजा और ज़मोरिन भी उसे खिराज़ देते थे। पाण्डुचेरी के फ्रांसीसी उसकी मुट्ठी में थे। इस तरह हैदर ने सारे दक्खिन पर अपना झंडा फहरा दिया था।

मगर यह सब उसने किसलिए किया? क्या वह अपने वास्ते या अपने बाल-बच्चों के वास्ते यह सब कर रहा था? उसका अपना क्या स्वार्थ था? यह बात सही है कि उसके बाद टीपू 'दैव' के पद पर बैठा। मगर हैदर की नीयत कभी यह न रही। उसने जो कुछ भी किया, मैसूर महाराजा के लिए, उनके नाम पर। मगर उससे भी ऊँचा एक दूसरा ख़्याल हैदर के मन में था। और वह ख़्याल था—हिन्दुस्तान को यूरोपीय ख़तरे से बचाना। इन्हीं दो बातों को सामने रखकर उसने सारे काम किये। अगर उसे अपने लिए या अपने ख़ानदान के लिए यह राज्य हड़पना होता तो वैसा करने से उसे रोकनेवाली कोई ताक़त नहीं थी। मगर उसने वैसा नहीं किया, गोकि वैसा करने का साफ़ मौका भी आ गया था। आठवें चामराजा की मौत हो चुकी थी। उसके कोई औलाद न थी। ख़ानदान में कोई बालिग़ वारिस नहीं था। उस मौक़े पर हैदर चाहता तो लार्ड डलहौसी की नीति (Doctrine of Lapse) से काम ले सकता था, मगर उसने वैसा नहीं किया। बल्कि उसने सारे राजपरिवार के बच्चों को जमा किया और उनमें से एक होनहार लड़के को तख़्त का हक़दार चुना। वही चामराजा नौवाँ हुआ। उसने चुनने का तरीक़ा भी अजीब अख्तियार किया। एक बड़े कमरे में मिठाइयाँ, खिलौने, कपड़े,

फल, हथियार—वग़ैरह बच्चों को भानेवाली बहुत-सी चीज़ें इकट्ठी रख दीं। आप एक कोने में खड़े हो सब लड़कों को देखता रहा। लड़के आये। किसी ने हाथी लिया, किसी ने घोड़ा ; किसी ने मिठाई ली और किसी ने पैसों के थैले। एक लड़के ने दाहिने हाथ में कटार ली और बायें में एक नींबू। बस, हैदर ने उसी को चुना और राजा बनाया। उसने कहा—यही सच्चा राजा होगा ; क्योंकि इसने मुल्क की हिफ़ाज़त के वास्ते तलवार और उसे ज़रखेज़ बनाने के मतलब से फल लिया है।

मज़हब

औरंगज़ेब के बाद अठारहवीं सदी में जितने भी मुसलमान वज़ीर, सूबेदार या नवाब हुए ; उन सब में हैदर सबसे ज़्यादा उदार और दूरन्देश था। धार्मिक-सहिष्णुता उसमें ऊँचे दर्जे की थी। वह खुद एक फ़कीर घराने का था और उसके दिमाग़ पर उन फ़कीरों के संस्कार ही पड़े थे—जो बहुत ऊँचे चरित्रवाले थे और हिन्दू-मुसलमानों के बीच पुल का काम करते थे।

हैदर अपने को किसी मज़हब का नहीं मानता था। मुसलमानी कट्टरता उसमें नाम को भी न थी। हाथ में

एक तसबीह भर रखता था। ईद के दिन वह मसजिद में जाया करता था। हिन्दू-मंदिरों में भी जाया करता था। धार्मिक-झगड़ों को उसने कभी जगह नहीं दी। कहते हैं कि एक बार शिया-सुन्नियों में झगड़ा हुआ। ताज़ियों को लेकर झगड़ा बढ़ा और फ़ैसले के वास्ते हैदर के पास पहुँचा। हैदर ने दोनों तरफ़ के बड़े लोगों से पूछा—'तुम लोग जिनका नाम लेकर लड़ते हो क्या वे आज ज़िन्दा हैं ?' जवाब मिला—'नहीं'। हैदर ने कड़ककर कहा—"तब तुम लोग लड़कर उनको क्यों बदनाम करते हो ? वे तुम्हारे झगड़े देखने नहीं आते। क्या यह हिमाक़त नहीं है ? आइन्दा कभी इस तरह हुकूमत का वक़्त ख़राब करोगे तो सख़्त सज़ा दी जायगी।"

हैदर उस वक़्त के शृंगेरी मठ के जगद्गुरु शंकराचार्य से बहुत मित्रता रखता था। मुश्किल के मौक़ों पर उनसे सलाह लेता था। उनसे उसका बराबर पत्र-व्यवहार चलता रहता था। एक बार उसने शंकराचार्य को हाथी, घोड़े चोब, चँवर और ध्वजाओं के साथ एक बड़ी रक़म और कुछ जवाहिरात भेजे थे।

राजकुल की देवी चामुण्डेश्वरी पर भी उसका विश्वास था। लड़ाई पर जाने के पहले वह मंदिर के बाहर हाज़िर

होता, आरती करवाता और चरणामृत लेकर ही घोड़े की पीठ पर बैठता था।

हैदर ने राज्य के सारे मंदिरों को जायदाद और आभूषण भेंट में दिये थे। कहा जाता है कि एक बार उसका प्यारा हाथी 'गज पवन' बीमार हो गया। उसकी आँख मारी गयी। हकीम और वैद्यों के इलाज से भी कुछ फ़ायदा न हुआ। हैदर चिन्तित था। एक रात स्वप्न में नंजुण्डेश्वर महादेव ने कहा कि मेरे दरबार में पन्द्रह दिन तक टहल उठा, चरणामृत से हाथी की आँख धो—वह अच्छा हो जायगा। हैदर ने वैसा ही किया। नंजनगूड़ जाकर टहल उठायी। हाथी की आँख चरणामृत से धोयी गयी और अच्छी भी हो गयी। उस दिन से देवता का नाम ही 'हकीम नंजुण्डेश्वर' हो गया। और आज भी वहाँ हैदर और टीपू के नाम से संकल्प होता है—खास तिथियों पर। अपने श्रीरंगपट्टणम और बेंगलोर महल के बगल में हिन्दू मंदिर बनाये और उनकी पूजा की घण्टी सुनने के बाद ही वह खाना खाता था-ऐसा आज भी कहा जाता है।

हैदर का ख़्याल था कि सभी मज़हब एक हैं, सच्चे हैं और ख़ुदा की राह पर ले जानेवाले हैं। उनमें दख़ल

देनेवाला काफ़िर है। काश! आज के लोग हैदर की इन बातों पर ग़ौर करते! इसीलिए उस समय के दूसरे हिन्दू राजा लोग भी हैदर पर भरोसा रखते थे। नाना-फड़नवीस तो हैदर को देश का सच्चा हितू और रक्षक ही मानता था।

इंसाफ़

सरकारी मुलाज़िम होना इज्ज़त और आराम की ज़िन्दगी बसर करने का आसान रास्ता है। मगर, सरकार अगर चुस्त और रिआया की भलाई का ख़्याल रखनेवाली हो तो सरकारी मुलाज़िमत फूलों की सेज नहीं रहती। हैदर अली की अमलदारी में वही हालत थी। सरकारी असले डर से थर-थर काँपते रहते कि कहीं कोई लापर्वाही या ग़लती न हो जाय। क्योंकि ऐसी हालत में हैदर किसी को माफ़ नहीं करता। मामूली रिआया का कोई आदमी हैदर से माफ़ी का हक़दार हो भी जाय, या उसकी मेहरबानी की भीख माँग भी ले; मगर कोई सरकारी मुलाज़िम भारी से भारी सज़ा पाये बग़ैर नहीं निकल सकता था। बहुत से जागीरदार और अहकाम—जो कभी अपना फ़र्ज़ अदा कर हैदर से इनाम और बड़े ओहदे पा

चुके थे—कभी लापर्वाही दिखाते या किसी रिआया को सताते तो हैदर के हाथों क़त्ल होते अथवा सब माल-असबाब जुर्माने में अदाकर मुफ़लिस बनते। जो एक दिन हैदर के पिट्ठू बनकर घमण्ड से उछलते चलते थे, उन्हीं को आखिर में भूखों मरते भी देखा गया। उसकी इस नीति का यह असर था कि उसके रहते उसके राज्य में किसी तरह की गड़बड़ी न होने पायी! क़सूरवार मुलाज़िमों की नज़र में हैदर ज़ालिम था। उसका कोड़ा मशहूर था।

कुछ ऐतिहासिकों ने लिखा है कि इस मामले में उसने अपने बेटे टीपू को भी नहीं छोड़ा। कहा जाता है कि टीपू 'नगरा' के पास त्र्यम्बक मामा की फ़ौज को लूटकर बहुत-सा माल व नक़दी लाया। मगर उसे शाही खज़ाने में जमा नहीं करवाया। जब हैदरशाह को इस बात का पता चला तो टीपू से जवाब-तलब किया गया। टीपू ने इसे मंज़ूर कर लिया। बस क्या था? हैदरशाह का मुँह लाल हो गया। वह अमानत में खयानत बर्दाश्त न कर सका। सरे-दरबार गरज उठा—"टीपू, मैं तुझे माफ़ नहीं कर सकता। मेरी नज़र में बेटा और रिआया बराबर हैं। मैं यहाँ बैठा हूँ इन्साफ़ क़ायम करने के लिए। मैं किसी की मनमानी नहीं सह सकता। हम महाराज के ताबेदार

हैं । मैंने जब 'करनूल' को फ़तह किया था और नासिरजंग की फ़ौज को लूटा था, तो ५० ऊँट अशर्फ़ियाँ मेरे हाथ लगी थीं । मैं चाहता तो सब अपने घर में डाल लेता । कोई पूछनेवाला न था । मगर नहीं, ख़ुदा ऊपर देख रहा था । उसमें की एक पाई मेरे लिए हराम थी । मुझे अफ़सोस है कि मेरे फ़र्ज़ंद के हाथों ऐसा काम हुआ । टीपू ! तुझे हुक्म दिया जाता है कि तू दस दिन के अन्दर १ लाख 'वरहा' (३॥) का वरहा होता था) सरकारी ख़ज़ाने में बतौर जुर्माने के जमा कर दे । नहीं तो तेरी जागीर छीन ली जायगी ।" लोग दंग रह गये । मगर किसी की हिम्मत नहीं थी कि इसके ख़िलाफ़ कोई आवाज़ उठाता । टीपू ने वह रक़म सरकारी ख़ज़ाने में जमा कर दी ।

* * *

और एक वाक़या—

कोयम्बत्तूर के बाज़ार में हलचल मची हुई है। हैदरशाह उधर से गुज़रनेवाले हैं । हरकारा चिल्ला चिल्ला कर लोगों को आगाह करा गया है । लोग घबराये हुए-से इधर-उधर कर रहे हैं । दूकानदार दूकानों को सजा रहे हैं । सरकारी मुलाज़िम परेशान हैं ।

'वह देखो, सवारी आ ही गयी।'

'वही हैं हैदरशाह? उस सफ़ेद घोड़े पर?'

'हाँ, वही हैं।'

'मगर कई घुड़सवार हैं वहाँ तो!'

'हाँ भाई, उनके मुलाज़िम, वज़ीर, सिपहसालार वग़ैरह तो साथ रहेंगे ही।'

'क्या रोब है चेहरे पर! साँवले हैं तो क्या?'

'देखो, कैसा गठीला बदन है। बदन का हर अज़ो फ़ुर्ती का ख़ज़ाना है। सैकड़ों मील घोड़े की पीठ पर सफ़र करना इनका रोज़ का काम है। आज यहाँ तो कल वहाँ।'

इसी वक़्त—"इंसाफ़! इंसाफ़" चिल्लाती एक लाग़र बुढ़िया लाठी टेकती आ खड़ी हुई। लोगों ने उसे देखा और आगे कर दिया। इतने में घुड़सवार भी वहाँ आ पहुँचा। बुढ़िया चिल्ला उठी—

'अल्लाह के बंदे, शाह! मेरा इंसाफ़ कर। मेरी, बेवा की बात सुन! मुझ पर बड़ा जुल्म हुआ है!'

हैदरशाह की निगाह उस पर पड़ी। वह तुरंत घोड़े से उतर पड़ा। उसके उतरते ही दूसरे सवार भी उतर पड़े।

'माँ, क्या बात है? तुम ने इतनी तकलीफ़ क्यों उठायी? किसी के हाथ एक पुर्ज़ा लिखकर भेज देती तो तुम्हारा काम हो जाता।'

'बेटा, तेरा इक़बाल बुलन्द हो। तेरी हज़ारी उमर हो। तूने आख़िर मेरी खबर ले ही ली। आह, ख़ुदा?'

'बोल माँ, बात क्या है? क्या इंसाफ़ खोज रही है तू?'

'इस दुनिया में बड़ा अन्धेर है बेटा! ग़रीब की कोई नहीं सुनता। देख बेटा, मेरी एक ही बेटी थी। मेरी ज़िन्दगी का सहारा थी।'

'हाँ, तो क्या हुआ उसका?'

'उसे तेरा आग़ा मोहम्मद भगा ले गया!'

'आग़ा मोहम्मद? अर्दली का सिपाही? उसके गये तो महीना भर से ज़्यादा हो गया। अब तक उसकी शिकायत क्यों नहीं की?'

'शिकायत किससे करती बेटा? तुम्हारे सभी अफसर बेईमान हैं। कई बार अर्ज़ियाँ लिखाकर तुम्हारे अर्दली हैदरशा के हाथों में दी थीं। एक का भी जवाब नहीं मिला। वही है न हैदरशा। पूछ लो बेटा उससे।'

'क्यों, हैदरशा, यह बात सही है?'

'हुज़ूर, यह....,

'साफ़ बोलो, क्या बात है?'

'हुज़ूर, यह बुढ़िया और इसकी बेटी बदचलन हैं।'

'मेरा सवाल यह नहीं है कि ये नेकचलन हैं या बदचलन। तुमको अर्ज़ियाँ मिलीं या नहीं?'

हैदरशा का सिर झुक गया। वह जवाब न दे सका।

'अपना कुसूर क़बूल करता है?'

'हुज़ूर'—हैदर दो जानू हो, शाह के पैरों पर गिर गया। हैदर अली बिजली की तरह तड़प उठा। अलग हटकर खड़ा हो गया और कड़क कर कहने लगा—

'नमकहराम कुत्ते! तू हैदर अली को नहीं जानता? उसने सल्तनत की बागडोर इसलिए नहीं थामी है कि तुझ सरीखे बदमाश, राजा के नाम पर उसकी रिआया को सताएं। ख़ुदा ने कमज़ोरों और यतीमों की हिफ़ाज़त के

लिए ही बादशाह को बनाया है। जो राजा यह फ़र्ज़ अदा नहीं कर सकता, ज़ालिम को सज़ा नहीं दे सकता, वह पाक तख़्त पर बैठने लायक़ नहीं। वह अपनी रिआया की मुहब्बत और यक़ीन का हक़दार नहीं। हैदरशा, ज़ालिम, तूने मेरी रिआया को मेरे पास आने से रोका है। इसके लिए तुझे जो सज़ा दी जाय थोड़ी है। फिर भी तू उस आग़ा मोहम्मद का सर मेरे सामने हाज़िर कर, जिसकी तरफ़दारी करके तूने इस ग़रीब बुढ़िया के ख़िलाफ़ साजिश की है। इसकी लड़की को भी हाज़िर कर और इस बुढ़िया को सौंप दे। उसके बाद तेरी नंगी पीठ पर सरे-बाज़ार दो सौ कोड़े पड़ेंगे।"

हैदरशा गिड़गिड़ाता रहा, मगर हैदर अली बुढ़िया को तसल्ली देने लगा—

'बूढ़ी माँ, तुम धीरज रखो। मेरी वजह तुम्हें तक़लीफ़ पहुँची है। अब चलो, मेरे महल में रहो। आज से तुम भी मेरी माँ हुई।'

बुढ़िया की आँखों से आँसू गिरने लगे। कहने की ज़रूरत नहीं कि हैदर के हुक्म का हर्फ़-ब-हर्फ़ पालन हुआ।

दिल की आग

करीम—दीवान साहब! आज एक वकील पूना से आया है। वह आपसे और अब्बाजान से मिलना चाहता है। आप को तो ख़बर मिली होगी। कब मुलाक़ात हो सकती है?

पूर्णय्या—शाहज़ादा साहब, हुज़ूर से मुलाक़ात करने का यह वक़्त नहीं है। यह वक़्त उनके आराम करने का है—सो तो आप जानते ही हैं। अभी तक उनकी तन्दुरुस्ती पूरी तरह से ठीक नहीं हुई है। फिर भी वे चिन्ता करना छोड़ते नहीं हैं।

करीम—क्या सोचा करते हैं वे? मसला क्या है?

पूर्णय्या—मसला? यही कि फिर हिन्दुस्तान अपनी पुरानी शान को पा जाए। फिर एक बार मुग़ल बादशाह अपने तख़्त और राज की इज़्ज़त रख सके। फिर एक बार अकबर बादशाह के दिन हिन्दुस्तान को देखने को मिलें। आप देखते नहीं कि चारों तरफ़ से एक अंधेरा पर फैलाए चला आ रहा है। इसको रोका न गया तो यह हिन्दुस्तान पर ऐसा छा जाएगा कि फिर सदियों राह नहीं सूझेगी।

करीम—दीवान साहब, अब्बाजान के ये ख़्यालात ही उन्हें तंग कर रहे हैं। वे कभी कभी बड़बड़ाया करते हैं, कभी पैर पटककर जोश में कुछ कहने लगते हैं। कभी-कभी तो ऐसे तैश में आ जाते हैं कि डर लगता है सामने जाने में। मगर इतना सोचने और ज़िक्र करने से क्या होगा!

पूर्णय्या—शाहज़ादा साहब! अभी आप इन बातों को नहीं समझ सकते। उनकी यही तो बीमारी है। मगर हर किसी को यह बीमारी नहीं होती। जिसको होती है उसको फिर मुब्तला बना देती है। फिर खाना-पीना और नींद हराम हो जाती है। शाहज़ादे साहब, आप अपने अब्बा को अब्बा समझते हैं—बस! ठीक है, आप उनको क्या पहचानें? आप ही, क्यों, आज हिन्दुस्तान के लोगों में अंगुलियों पर गिनने लायक़ लोग ही होंगे जो उन्हें ठीक ठीक पहचानते हों। अगले ज़माने में तो शायद इतने लोग भी न मिलेंगे जो इनकी ठीक पहचान कर सकें। आज इस दुनियाँ के पर्दे पर जो नायाब हस्तियाँ हैं, उनमें आपके वालिद एक हैं। आपको फ़ख्र होना चाहिए शाहज़ादा साहब! मगर आप....(चला जाता है)

करीम—दीवान साहब, मालूम तो पड़ता है कि आप भी उसी मर्ज़ में मुब्तला हैं ।—अरे वह, अब्बाजान खुद ही इधर तशरीफ़ ला रहे हैं ।

हैदर अली (प्रवेश)—क्या है करीम ? क्या कर रहे हो ? 'आईने-अकबरी, खतम हो गयी ?

करीम—हाँ, अब्बा । एक हफ़्ते पहले ही खतम हो गयी । उसको पढ़कर ही मैं समझ पा सका हूँ कि अकबर कितना बड़ा आदमी था । वह बादशाह था, इसलिए बड़ा आदमी नहीं बना । द्र-असल वह बड़ा आदमी था । और उसका दीने-इलाही, अब्बा, क्यों नहीं फैला ?

हैदर अली—इस मुल्क की बदकिस्मती, और क्या ? बेटा, तुम अकबर बादशाह की तरह बनो । उसके अधूरे काम पूरे करो । मेरे सपने पूरे कर सको—।

करीम—अब्बा, आप इस तरह फ़िक्रमन्द क्यों रहते हैं ? यही बात अभी दीवान साहब से पूछ रहा था । वे कहने लगे—आपके अब्बा नायाब हस्ती हैं और इनको चाणक्य और चन्द्रगुप्तवाली बीमारी हो गयी है । क्या अब्बा ?

हैदर—बेटा! दीवान साहब ग़लत कह रहे हैं। मैं चाणक्य और चन्द्रगुप्त के पाँव की धूल भी नहीं हो सकता। जानते हो बेटा, उन लोगों ने क्या किया? उस ज़माने में भी हिन्दुस्तान कुछ ऐसी ही हालत से गुज़र रहा था—जैसी कि आज है। यूनान का बहादुर सिकन्दर सारे एशिया को कुचलता हुआ हिन्दुस्तान पर चढ़ आया था। पंजाब का पोरस लड़ा। सिकन्दर थक गया था, वहीं से लौट गया और राह में मर गया। उसके बाद उसका सूबेदार सेल्यूकस—जो हिन्दुस्तान की दौलत देख गया था, फिर इस पर चढ़ आया। उसके तो दाँत गड़ गये थे इस मुल्क पर। उसकी बहादुर सेना को कोई रोक भी न सकता था।

करीम—तो फिर किसने रोका?

हैदर—उन्हीं चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने। उन दोनों ने ही मिलकर सोते हिन्दुस्तान को जगाया। उसकी रगों में ख़ून भरा और हिन्दुस्तान खड़ा हो गया। फिर सौ सेल्यूकस भी कुछ नहीं कर सकते थे।

करीम—आख़िर हुआ क्या?

हैदर—हुआ क्या? सेल्यूकस को अपनी लड़की देकर, अपना राज देकर लौट जाना पड़ा। अगर उन

लोगों के हुनर का सौवाँ हिस्सा भी पा जाता तो इस प्यारे, पाक़ हिन्दुस्तान को इस आनेवाली गुलामी से हमेशा के लिए बचा लेता । करीम, तुम्हें यह सब पढ़ना चाहिए । मैं मौलवी साहब से कहे देता हूँ । 'शेरनामा' पढ़ रहे हो न ? अच्छा, दीवान साहब कहाँ गये ? ज़रा उन्हें भेजो तो ।

करीम—जो हुक्म अब्बा ! पूना से वकील आया है । शायद उसका इन्तज़ाम करने गये हैं । मैं अभी देखता हूँ । (जाता है)

हैदर—(अपने से) हूँ, आसार तो अच्छे नज़र आ रहे हैं । पूना से वकील । फ्रांसीसी लोग भी अंग्रेज़ों से परेशान हैं । अंग्रेज़ों ने 'माही' पर कब्ज़ा कर लिया है । मगर यह कैसे हो सकता है ? 'माही' हमारा ज़बर्दस्त बन्दरगाह है । 'माही' और 'मंगलोर' ही तो हमें यूरोप और अरब से जोड़ते हैं ।—कौन ?

सिपाही—(सलाम करता है) हुज़ूर, दीवान साहब खिमदत में हाज़िर होना चाहते हैं ।

हैदर—पेश करो ।

(दीवान पूर्णय्या पेशवा के वकील गणेश राव के साथ आता है। गणेश राव पेशवा का भेजा फ़रमान पेश करता है। पूर्णय्या फ़रमान पढ़कर हैदर को सुनाता है।)

हैदर—और कुछ आपको कहना है गणेश राव साहब?

गणेश राव—मुझे कहना ही ज़्यादा है हुज़ूर। फ़रमान में तो लिखा बहुत कम है।—श्री नाना साहब फड़नवीस मैसूर की चौथ घटाने को तैयार हैं। वे मैसूर रियासत के वे इलाके भी छोड़ देने को राज़ी हैं, जो ज़ुर्माने के तौर पर मराठा राज्य में मिला लिये गये थे। सिर्फ़ नाना साहब की फ़रमाइश यह है कि मैसूर अपने को मराठा राज का एक हिस्सा मान ले, और इस वक़्त मुल्क पर जो आफ़त आयी हुई है, उसे दूर करने में पेशवा का साथ दे। पेशवा ने अपने दिल्ली के वकील को हिदायत दी है कि वह बादशाह शाहआलम को वारन हेस्टिंग्स की चालबाज़ियों से आगाह रखें और बचाने की कोशिश करें तथा उन्हें पेशवा का तरफ़दार व विश्वस्त बनाये रखें। नाना साहब ने यह भी खबर भेजी है कि इस वक़्त माधोजी सिंधिया और मूदाजी भोंसले ने पेशवा के साथ दग़ा किया है। वे अंग्रेज़ों के जाल में पड़ गये हैं। अगर बादशाह शाह आलम उत्तर के सारे हिन्दू-मुसलमान रियासतदारों को

मिला सकें तो इस वक़्त एक ज़बरदस्त कोशिश की जा सकती है और अंग्रेज़ों के पैर उखाड़े जा सकते हैं। निज़ाम से भी खतो-किताबत हो रही है; पर हर-हालत में नाना साहब फड़नवीस हैदरशाह पर ही पूरा भरोसा रखते हैं; उनको अपना भाई और दाहिना हाथ समझते हैं। वे आपके बल पर ही अंग्रेज़ों का मुक़ाबला करने के लिए अपनी तलवार उठानेवाले हैं। अब नाना साहब जानना चाहते हैं कि हैदरशाह की मंशा क्या है?

हैदर—गणेश राव, पेशवा की मेहरबानी का मैं बराबर शुक्रगुज़ार रहूँगा। उन्होंने मुझे इस लायक़ समझा यह उनका बड़प्पन है और मेरे लिए फ़ख्र का बाइस है। और नाना साहब ने तो मानों मेरे मन की बात ताड़ ली है। भाई, नाना साहब से मेरी तरफ़ से अर्ज़ करो कि हिन्दुस्तान की ख़िदमत के लिए वे मुझे एक अदना सिपाही समझें और जब जो हुक्म देना हो, दें। हैदर उनका ताबेदार है। हैदर हिन्दुस्तान को बचाने के वास्ते अपने ख़ून का आख़िरी क़तरा तक बहाने के लिए हर वक़्त तैयार रहेगा। हाँ, उनसे यह भी अर्ज़ कर देना कि हैदर के पास दिल है, दिल में मुल्क की ख़िदमत करने के अरमान हैं। मगर उसके पास दिमाग नहीं है, सिर्फ़ है तलवार

और कलाई में ताक़त। नाना साहब अपनी महाराष्ट्र बुद्धि से हमें रास्ता दिखावें, हमारी यही ख़्वाहिश है।

और एक बात नाना साहब से अर्ज़ करना। निज़ाम मदद करने का वादा कर रहा है ज़रूर। मगर उसने इसके पहले अपने मालिक मुग़ल बादशाहों के साथ इस तरह के बहुत से वादे किये हैं, जिनका नतीजा बुरा निकला है। इसलिए हमें उसके वादे पर भरोसा नहीं करना है। बल्कि और ज़्यादा होशियार रहना है उस ओर से। वह ख़तरे की जगह है।

अरे, मैं तो कहता ही जा रहा हूँ। क्यों पूर्णय्या, तुम चुप हो ?

पूर्णय्या—हुज़ूर, मुझे इस में कुछ जोड़ना नहीं है। आपसे मैं एकराय रखता हूँ।

हैदर—क्यों, गणेश राव को कुछ तकलीफ़ तो नहीं है ? पेशवाओं का सामान हम कहाँ से मुहय्या कर सकते हैं ? फिर भी मेहमान की ख़ातिरदारी में कुछ चूक न हो।
(आदाब, सलाम के बाद सब उठते हैं)

जीत का डंका

आर्काट का नवाब मुहम्मद अली अंग्रेज़ों के हाथ की कठपुतली था। ईस्ट इंडिया कंपनी के डाइरेक्टरों की ख़्वाहिशें पूरी करने, आये दिन अंग्रेज़ी फ़ौज का खर्चा जुटाने और मद्रास क़िले के अन्दर के किसी भी ऐरे-ग़ैरे की ज़रूरतें पूरी करने के वास्ते उसे रिआया को सताकर धन जमा करना पड़ता। कर्नाटक की प्रजा 'त्राहि' 'त्राहि' कर उठी। हैदर के पास अत्याचार की ख़बरें और प्रजा को इससे बचाने की प्रार्थनाएँ पहुँचने लगीं। हैदर से यह देखा न गया। उसका ख़ून उबल पड़ा। आख़िर १७८० ई. की जुलाई में उसने कर्नाटक पर चढ़ाई करने का हुक्म दे ही दिया। कर्नाटक के सभी क़िलों में मुहम्मद अली की मदद के वास्ते कंपनी की फ़ौजें मौजूद थीं। जनरल कास्वी इनका सेनापति था। हैदर अली की सेना भी टीपू, करीम और दूसरे कई हिन्दू-मुसलमान सिपहसालारों की मातहती में टुकड़ियों में बंटकर अलग-अलग दिशाओं में बढ़ चली। कर्नाटक की प्रजा ने दिल खोलकर इन लोगों का स्वागत किया और भरसक मदद पहुँचायी। कंपनी और मुहम्मद अली की गंगा-जमुनी सेना कहीं भी हैदर की सेना को रोक न सकी। एक के बाद एक क़िले हैदरअली

के कब्जे में आने लगे। कोरोमंडल (चोलमंडल) में उन दिनों 'महमूद बन्दर,—जिसे बाद को 'पोर्टोनोवो' या 'फरंगीपेट' नाम मिला—एक ज़बर्दस्त तिजारती जगह था। करीम ने इसको लूटा और करोड़ों रुपये का माल लूटकर अपने बाप हैदर के सामने पेश किया।

'मियाँ की दौड़ मसजिद तक'। मुहम्मदअली ने भाग कर मद्रास में अंग्रेज़ों के दामन में मुँह छिपाया। १० अगस्त, १७८० को हैदर की एक टुकड़ी मद्रास के पास सेण्ट थामस की पहाड़ी पर आ पहुँची। उसी दिन 'पूरीमपाक्कम' के पास कर्नल बेली और टीपू की फ़ौजों की टक्कर हुई। यहाँ अंग्रेज़ बुरी तरह हारे। कर्नल बेली और सर बेवर्ड हैदर के हाथ गिरफ़्तार हुए। इस जीत के बाद तो फिर हैदर के नाम से अंग्रेज़ सिपाही कांपने लगे। हैदर की सेना जिधर बढ़ती उधर ही विजय आंचल पसारकर खड़ी हो जाती। स्वतंत्रता के उस पुजारी की यादगार—इस लड़ाई का नक़शा आज भी श्रीरंगपट्टणम के दौलतबाग़ महल में मौजूद है।

'पूरीमपाक्कम' की जीत के बाद जिधर भी हैदर की फ़ौज का रुख हुआ, अंग्रेज़ी सेना भागती नज़र आयी। 'जिंजी' के ऊपर हमला हुआ और वहाँ की कंपनी बहादुर

की सेना ने तोपखाना तालाब में फेंक दिया और मद्रास के क़िले में जाकर जान बचायी। 'जिंजी' और आसपास के भागों को जीतकर हैदर की फ़ौज आर्काट पहुँची। तीन महीने के मोहासरे और ख़ून-ख़राबी के बाद आख़िर आर्काट ने भी हैदर के क़दमों में सिर झुका दिया। यहीं हैदर के दामाद हाफ़िज़ अली खाँ भी खेत रहे।

क़िले पर कब्ज़ा करने के बाद हस्ब-दस्तूर ऐलान कर दिया गया कि कोई भी सिपाही या फ़ौजी अफ़सर वहाँ की रिआया की जान या माल पर हाथ न लगाये। कोई भूखा न रह जाय। किसी को भी कपड़े-लत्ते और घर-बार की तकलीफ़ न होने पावे। आज से यहाँ की रिआया हमारी औलाद के समान है। उसकी सारी जिम्मेवारी हमारे ऊपर है।

हैदर ने इस काम के लिए एक ख़ास अफ़सर मुक़र्रर कर रखा था। कोई सिपाही या अफ़सर अपनी जीत के घमण्ड में भूल कर—जैसा कि स्वाभाविक है—कुछ ऐसा अत्याचार या लूट-खसोट करता तो कड़ी से कड़ी सज़ा का हक़दार बनता। बहुत दिनों तक पीरज़ादा ख़ाकी शाह इस महकमे का हाकिम था, जो सिपाहियों के चाल-चलन पर कड़ी निगाह रखता था। पीरज़ादा एक मुसलमान फ़क़ीर था और हमेशा सेना के साथ रहता था। यह आम्बूर की लड़ाई में दुश्मनों के हाथ मारा गया।

हैदर हारे हुए दुश्मन को सताना अपनी शान के खिलाफ़ समझता था। अक्सर उनको इज्ज़त के साथ उनके घर तक पहुँचा देता। अंग्रेज़ों के साथ बराबर उसने यही बर्ताव किया। मगर उन्होंने कभी उसका शुक्र नहीं माना, उल्टे उनसे नाजायज़ फ़ायदा उठाने की कोशिश की। इस बार भी उसने वैसा ही किया। चित्तूर, चन्द्रगिरी, मण्डलगढ़, कैलाशगढ़, सातगढ़, आम्बूर वग़ैरह फ़तह कर हैदर और टीपू ने वहाँ के अंग्रेज़ों को बा-हिफ़ाज़त मद्रास के क़िले में भेज दिया।

हिन्दुस्तान की तवारीख़ में ऐसे बहुत से प्रमाण मिलते हैं जब कि हिन्दुस्तानी वीरों ने अपने दुश्मनों के प्रति दया दिखाकर अपनी जड़ में आप कुल्हाड़ी मारी ; मगर उन्होंने हिन्दुस्तान के उस महान आदर्श को कभी आँखों से ओझल नहीं होने दिया। हैदरअली भी हिन्दुस्तानी वीर था। उसने भारतीय वीरता के आदर्श को निभाया। क्योंकि वह प्राकृतिक वीर था। परिस्थितियों ने उसे योद्धा नहीं बनाया—जैसे कि उसके प्रतिद्वन्द्वी थे।

इस तरह गुण्टूर से आर्काट और कडलूर तक सारे कर्नाटक पर जीत का डंका बजाता हुआ हैदर अली आगे बढ़ा।

चिराग़ गुल

लार्ड क्लाइव के बाद वारेन हेस्टिंग्स गवर्नर जनरल की गद्दी पर आया और कंपनी का राज मज़बूत करने की दिलोजान से कोशिश करने लगा। बंगाल की नवाबी का अन्त हो चुका था। दिल्ली की बादशाहत और अवध की नवाबी भी घुटने टेक चुकी थी। पेशवा का बोलबाला था, इसलिए हेस्टिंग्स ने अपनी सारी ताक़त उधर लगा दी थी। तलवार से ज़्यादा हेस्टिंग्स को अपनी कूटनीति पर भरोसा था। महाराष्ट्र मण्डल के ज़बर्दस्त सेनापति और प्रधान स्तंभ माधोजी सिंधिया और मूदाजी भोंसले को पेशवा बनाने का विश्वास दिलाकर अपनी तरफ़ फोड़ चुका था। निज़ाम को तो आसानी से वह अपनी मुट्ठी में रखे हुए था। पेशवाओं से लड़ने के वास्ते उसने अंग्रेज़ी पल्टन भेजी और बुरी तरह मुँह की खायी। क्योंकि पेशवाओं का सलाहकार नाना फड़नवीस कच्ची गोलियों का खिलाड़ी नहीं था। हेस्टिंग्स इस हार से कुछ परेशान ही था कि हैदर अली की चढ़ाई और अंग्रेज़ी फ़ौज की हार की ख़बर उसे मिली। इधर से उसे कोई शंका न थी। मगर फ़ोर्ट सेंट जार्ज (मद्रास) के अंग्रेज़ों ने जब हैदर की ताक़त

और अपनी परेशानी का हाल लिख भेजा तो हेस्टिंग्स भी घबराया। पैरों तले से ज़मीन खिसकती नज़र आयी। मालूम पड़ा, दक्खिन से अंग्रेज़ी सत्ता उठ जायगी। मद्रास से बोरिया-बँधना उठाना पड़ेगा। और फिर कौन जाने यह हैदर और पेशवा मिलकर बंगाल पर भी न चढ़ आयें!—वह बौखला गया। उसने तुरंत एक बड़ी फ़ौज और भारी रक़म देकर सर आयर कूट को हैदर का मुक़ाबिला करने के लिए भेजा। उस समय वारेन हेस्टिंग्स ने बंगाल की तबाही की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। और सारा माल-असबाब बंगाल से भेजता रहा, दक्खिन जीतने के वास्ते। उस समय भी १९४३-४४ ई० की तरह भयंकर अकाल पड़ा था। सारे सूबे की तिजारत और दस्तकारी बर्बाद हो चुकी थी। लोग कीड़ों की तरह मर रहे थे। कोई किसी को पूछनेवाला न था। इनसान जानवर से भी गया-गुज़रा हो रहा था। दीवानी तो शाह आलम से अंग्रेज़ ले ही चुके थे। सारी ज़िम्मेवारी इन पर थी। मगर ये रिआया की परवरिश करने के बदले लूट-खसोट रहे थे और आफ़त पर आफ़त ढा रहे थे। वारेन हेस्टिंग्स को बंगाल की तबाही की फ़िक्र न थी—उसे फ़िक्र थी अंग्रेज़ी राज्य बढ़ाने की। वह तो राज्य क़ायम करने आया था। अस्तु।

इधर सर आयर कूट ने दो बार बड़ी कुमक के साथ हैदर का मुक़ाबिला किया। पर हर बार बुरी तरह मुँह की खायी। आख़िर १७८२ ई. में घबराकर फिर बंगाल वापस चला गया। सर आयर कूट बड़े सधे हुए जनरल और अनुभवी लड़ाकू थे। इसलिए उन की लड़ाई की एक दो दिलचस्प घटनाओं का यहाँ ज़िक्र करना बुरा न होगा।

मन्नारगुड़ी (आर्काट) के क़िले पर सर आयर कूट की पल्टन ने हमला किया। उस समय क़िले में कुल बीस सिपाही और कुछ स्त्रियाँ थीं। उनको अंग्रेज़ों की चढ़ाई का अन्देशा नहीं था। फिर भी जब अंग्रेज़ों के आने की खबर मिली तो तैयार हो गये। फाटक बन्द हो गया। अन्दर बुर्ज़ों पर पत्थर के बड़े बड़े टुकड़े जमा किये गये। औरतों ने गोबर मिला पानी खूब गरम कर हंड़ों में रखा। ज्यों ही अंग्रेज़ी सिपाही दीवारों पर चढ़ने लगे त्योंही मर्दों ने अपनी बंदूकें सीधी कीं और गोलियाँ दागने लगे और औरतें बड़े बड़े पत्थर लुढ़काने लगीं तथा उबलता हुआ गोबर उड़ेलने लगीं। अंग्रेज़ सिपाही बन्दूकों से तो लड़ सकते थे। मगर ये बड़ी बड़ी चट्टानें और खौलता हुआ गोबर—उन्होंने कभी नहीं देखा था। वे घबरा गये। समझ में न आया कि दुश्मन के पास कितनी ताक़त है या क्या हथियार हैं। वे घबराकर भाग खड़े हुए।

दूसरी घटना और भी मज़ेदार हुई। टीपू की कुछ थोड़ी-सी फ़ौज ने 'तिरुकाट्टु पल्ली' के क़िले पर कब्जा कर लिया था। अंग्रेज़ों को इसकी ख़बर लगी तो त्रिचनापल्ली और तंजौर—दोनों जगहों से उन्होंने सेना भेजी—तिरुकाट्टुपल्ली पर हमला करने के वास्ते। रात अंधेरी थी। तंजौर की टुकड़ी ने उत्तर से और त्रिचनापल्ली की टुकड़ी ने दक्खिन से एक ही बार क़िले पर हमला कर दिया। उस रात टीपू वहाँ नहीं था। कहीं दो-चार मील किसी दूर के गाँव में था। बहुत थोड़े-से सिपाही क़िले के अंदर थे। वे चुप लगाये बैठे थे। दोनों तरफ़ की गोरी सेना क़िले की फ़सील पर चढ़ गयी और बन्दूकें चलाने लगी। रात भर भारी लड़ाई हुई और दोनों तरफ़ के क़रीब क़रीब सभी लोग मार गिराये गये। जब तक एक को दूसरे की आवाज़ पहचानने का मौक़ा आया तब तक सुबह हो चली थी। टीपू को ख़बर लग चुकी थी और वह अपने सिपाहियों के साथ वहाँ पहुँच चुका था। अंग्रेज़ भाग भी न सके। सब टीपू के हाथ गिरफ़्तार हो गये। टीपू कितना हँसा होगा—इसका अन्दाज़ा ही लगाया जा सकता है।

इस तरह दक्खिन में वारेन हेस्टिंस की एक न चली। उधर नाना फड़नवीस से भी वह बुरी तरह हार

गया था और आगे लड़ने को हिम्मत न थी। इसलिए उसने पेशवा से संधि की। सालवाई में संधि का पत्र लिखा गया था। अंग्रेज़ों की तरफ़ से दस्तख़त हो चुके थे। सिर्फ़ नाना फड़नवीस के दस्तख़त नहीं हुए थे। नाना साहब हैदर अली की लड़ाई का अन्त देखकर ही उसपर दस्तख़त करना चाहते थे, ऐसा जान पड़ता है। इस समय थोड़े अर्से के लिए मालूम हुआ कि बस, अब फ़िरंगियों को दक्खिन से भागना ही पड़ेगा।

मगर 'होता वही जो मंज़ूरे ख़ुदा होता है।' हिन्दुस्तान को अभी अच्छे दिन देखने नहीं थे। उसे अभी अपने कर्मों का फल भुगतना था। उसके भाग्य में जो गुलामी के हरूफ़ लिखे जा चुके थे, इतनी जल्दी मिटनेवाले नहीं थे। जब विजय-श्री हैदर के चरण चूमने जा रही थी, हिन्दुस्तान की तवारीख़ बदलने की घड़ी आ गयी थी, तब हैदर अली अपने सारे अरमान, अपने मुल्क को ऊपर उठाने के सारे मन्सूबे लिये हुए इस दुनियाँ से चला गया। चमकता हुआ तारा अचानक टूट गया। आज़ादी का चिराग़ भक से जलकर, लोगों की आँखों में चका-चौंध पैदाकर हमेशा के लिए गुल हो गया। जिसने सुना—आह करके रह गया। नाना फ़ड़नवीस ने वह

ख़बर सुनी और उसका दिल बैठ गया। सात महीने बाद उसने सालहबाई के संधि-पत्र पर दस्तख़त कर दिये। अंग्रेज़ों से लड़ने की हिम्मत अब उसमें नहीं रही। जो काम अंग्रेज़ों की फ़ौज, आयर कूट की वीरता और वारेन हेस्टिंग्स की कूटनीति न कर सकी, वह काम देश के दुर्भाग्य ने एक मिनट में कर दिया। हैदर की मौत हो गयी। अभी वह सिर्फ़ ६२ साल ही का तो था।

हैदर की मौत कैसे और कहाँ हुई, इस बारे में ऐतिहासिक एक राय नहीं रखते। कुछ कहते हैं कि ७ दिसम्बर १७८२ ई. को पीठ में फोड़ा हो जाने से आर्काट के क़िले में मरा। दूसरे लोगों का कहना है कि वह अपनी फ़ौज के साथ कूच कर रहा था। और उसके सब कूच तूफ़ानी हुआ करते थे। उसी में बीमार पड़ा। फिर भी चलता ही रहा। और चित्तूर के पास उसकी, अपने सिपाहियों के बीच, मौत हुई।

इसकी मौत की ख़बर बारे-आम रखी गयी। और राजाओं की मौत की तरह छिपाने की कोशिश नहीं हुई। गोकि टीपू उस समय मंगलोर की तरफ़ था। फिर भी राज्य में कोई झगड़ा नहीं हुआ, कहीं विद्रोह नहीं हुआ, कोई गड़बड़ी नहीं हुई। वजह यह थी कि हैदर की मौत

सारे देश के वास्ते दुख की घटना थी। सिपाही और किसान, मज़दूर और कारीगर—सब रो पड़े। क्योंकि वह उनका रक्षक था, उनका अन्नदाता था, उनको प्यार करता था, उनका प्यारा था। उसकी मौत से सारा दक्खिन अनाथ हो गया।

हैदर अली के शरीर को कोलार में उसके बाप की क़ब्र के पास दफ़नाया गया। बाद को जब श्रीरंगपट्टणम के लालबाग़ में इसका ख़ास मक़बरा बना तो टीपू ने वहाँ से मंगाकर यहाँ क़ब्र करवा दिया, जहाँ आज आज़ादी के इस सिपाही की हड्डियाँ गड़ी हैं। वहीं बाज़ू में उसकी बेग़म फ़ख़रुन्निसा सुलताना की व बाद को टीपू वग़ैरह की क़ब्रें भी बनायी गयीं।

गुलामी का शिकंजा

हैदर की मौत के बाद टीपू—जिसका पूरा नाम फ़तेहअली था—आर्काट आया। अपने बाप की जगह ली। और बाप की चलायी नीति जारी रखी। अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ लड़ता रहा। अंग्रेज़ भी पस्त हो गये थे। उनमें नाउम्मीदी फैल रही थी। इसलिए उन्होंने उस समय, ११ मार्च १७८४ ई. को दोज़ानू होकर टीपू

से सुलह कर ली। टीपू ने उनका इलाक़ा वापस कर दिया। उसे अंग्रेज़ों की बात पर भरोसा था। मगर था वह अभी कम-उम्र और नातजुर्बेकार ही। गो बहादुर, सीधा और उदार आदमी था। हैदर की नीति को वह बहुत दिन तक निभा न सका। बाद को उसकी क्या हालत हुई; अंग्रेज़ों के साथ उसकी कैसी निभी—वग़ैरह बातें हमारे दायरे के बाहर की हैं, जिन पर यहाँ चर्चा नहीं कर सकते।

यों तो हैदर के बाद टीपू ने उसकी जगह ली और दुनियाँ का काम और मैसूर का काम भी चलता रहा। हैदर की कमी शायद महसूस न हुई हो। यों तो हैदर का इतिहास और हैदर की जीवनी उसकी मौत के साथ ख़तम हो जानी चाहिए, जैसे हर आदमी की होती है। मगर हैदर उन मामूली आदमियों में न था, जिनकी ज़िन्दगी मरने के बाद ख़तम हो जाती है। हैदर उन आदमियों में था, जो जिन्दा रहते तक मुल्क की पतवार सम्हालते हैं और मौत के बाद उस मुल्क के लोगों के वास्ते ध्रुव-तारा बनकर चमकते और राह दिखाते रहते हैं।

हिन्दुस्तान के समझदार और दूर-दृष्टि रखनेवाले लोग हैदर से बड़ी बड़ी उम्मीदें रखते थे। दक्खिन का तो वह

सिरताज ही था। हैदर में उस तरह की सारी योग्यताएँ थीं। एक इतिहास-प्रेमी विद्वान 'हिन्दू' में लिखते हैं —"Hyder Ali may be accounted one of the greatest figures in Indian History and as a leader can be compared with Sivaji and Ranjit Singh. He was not inspired by blood, lust and love of spoil ; his was a national ideal ; and he very nearly achieved his aim." Rev. Edmund Bull (हैदर अली भारतीय-इतिहास के महापुरुषों में एक था। रणजीतसिंह और शिवाजी जैसे नेताओं से उसकी तुलना आसानी से की जा सकती है। वह लूट-मार और ख़ून का प्यासा नहीं था। उसका एक राष्ट्रीय उद्देश्य था और वह क़रीब-क़रीब वहाँ तक पहुँच गया था।—रे० एडमण्ड बुल)

इस कथन में ज़रा भी अत्युक्ति नहीं है। गोकि बहुत से स्वार्थी इतिहासकारों ने हैदर अली को काले रंग में रंगकर, उसे ख़ून का प्यासा और डाकू के रूप में चित्रित करने की पूरी कोशिश की है। मगर जब हिन्दुस्तान का सच्चा इतिहास ईमानदार हिन्दुस्तानियों द्वारा लिखा जायगा तब हैदर अली की असली क़ीमत देश को मालूम होगी। उस समय के इतिहासकार यह लिखेंगे कि हैदर अली ही वह पहला आदमी था, जिसने अंग्रेज़ी साम्राज्यनीति को शुरू में

ही ताड़ लिया था और जिसने अंग्रेज़ों की गुलामी का जुआ फेंकने की पहली बार कोशिश की थी। मगर वह असफल रहा।

हैदर की नाकामयाबी की वजह ढूँढ़ना हमारे दायरे से बाहर की बात नहीं है; यद्यपि इतिहास के विद्वान ही इसके सच्चे अधिकारी हैं। इन वजहों पर ग़ौर करने से दो-तीन बातें बार-बार हमारी आँखों के सामने आती हैं—मानों वे अपनी अहमियत बताना चाहती हैं कि इन पर पाठक ग़ौर करें।

आपस की ईर्ष्या-द्वेष ने, घर की फूट ने हिन्दुस्तान के भाग्य में क्या क्या उलट फेर किये हैं—यह लोगों से छिपा नहीं है। विभीषण, जयचन्द, दौलत ख़ाँ लोदी, मीरज़ाफ़र और राघोबा जैसे लोगों की कमी किसी देश में नहीं रही है। हिन्दुस्तान के इतिहास में तो ऐसे लोगों के काले कारनामे अनगिनत हैं। इस के साथ हम ऐसे लोगों की तादाद भी कम नहीं देखते, जो अपने छोटे-से नाचीज़ फ़ायदे के लिए देश के हज़ारों लोगों का गला घोंटने में आगा-पीछा नहीं करते। मगर सबसे भारी कमी जो समझदार महसूस करेंगे, वह यह कि देश की साधारण रिआया ने राजा और राजनीति को कभी महत्व का विषय

नहीं समझा। 'कोउ नृप होउ, हमहिं का हानी' वाली वृत्ति ज़बर्दस्त थी। इसलिए तलवार लिये जो कोई आया, जनता ने अपना सर झुका दिया। उसने यह नहीं विचारा कि कौन कैसा है या होगा? नहीं तो, हैदर अली में जो ताक़त थी और जो आदर्श थे, अगर आर्काट के नवाब मोहम्मद अली, निज़ाम और मराठों की मदद मिली होती और जनता ने उसकी सक्रिय सहायता की होती तो वे कभी नाकामयाब नहीं होते। पिछले दिनों में तो हिन्दू-मुसलिम झगड़े और द्वेष ने ही देश के नक्शे को बदलने में काम किया है।

मुसलमान—पठान या मुग़ल—हिन्दुस्तान में चाहे जिस मंशा से आये हों, आये और बस गये। बस जाने के बाद फिर उन्होंने हिन्दुस्तान को सपने में भी ग़ैर समझने की बात नहीं सोची। कुछ दिनों बाद तो इन दोनों क़ौमों में धर्म के सिवा कोई कहने लायक़ फ़र्क नहीं रह गया। हिन्दुओं की वह पहली ताक़त बच नहीं रही थी कि उन्हें वे अपने में मिला लेते। बाद को अकबर बादशाह ने इस तरफ़ ईमानदारी से कोशिश की। 'दीने इलाही' चलाया। उसकी इस कोशिश में दोनों तरफ़ के लोगों ने मदद पहुँचायी। कबीर और नानक जैसे

महात्माओं ने भी उसी उद्देश्य से काम किया। लेकिन ज़माना उसके माफ़िक़ न था। राजपूतोंने प्रताप सिंह के नेतृत्व में इसकी बड़ी मुख़ालिफ़त की। उनके सामने धर्म और समाज का सनातन रूप था। मगर देश की राजनीतिक इकाई का उन्हें कोई ख़्याल न था। बाद को औरंगज़ेब ने तो उन सारे प्रयत्नों पर पानी ही फेर दिया। और हैदर तो उस चक्की में पिस ही गया। यह साफ़ है कि हैदर अकबर के ख़्यालवाला आदमी था। मगर उसके इस तरह के ख़्याल ने शायद उसका बुरा ही किया। हिन्दू राजा और मुसलमान नवाब—किसी की भी उसे मदद न मिली। किसी का विश्वास वह न पा सका और उसकी सारी कोशिशें बेकार गयीं।

क्या हमारी आज बीसवीं सदी की राजनीति हैदर के ज़माने की राजनीति से बहुत आगे बढ़ गयी है?

इस मज़हबी झगड़े के अलावा भी हमारे देश की एक बड़ी कमज़ोरी रही है। उसे हम राष्ट्रीय कमज़ोरी कहना ज़्यादा पसंद करेंगे। क्योंकि उसके शिकार हिन्दू और मुसलमान-दोनों रहे हैं। आज भी उस दलदल से हम निकल नहीं पाये हैं। यह कमज़ोरी है—ज़माने की रफ़्तार में पीछे रहना; दुनियाँ की घुड़दौड़ में फिसड्डी

रहना ; निश्चिंतता की नींद सोना ; दूसरे लोग क्या कर रहे हैं, दुनियाँ में क्या हो रहा है—इन बातों को फालतू समझना।

हिन्दुओं के लिए समुद्री किनारों, हिन्दूकुश और आसाम की पहाड़ियों को पार करना पाप-सा क़रार दिया गया। उधर की हवा आने से रोक दी गयी। कुएँ के मेंढ़क की तरह अपनी दुनियाँ को ही हमें पूर्ण मान लेना पड़ा। मगर अचरज इस बात का है कि मुसलमान भी इस बात में हिन्दुओं के पीछे पीछे ही चलते रहे। अगर कोई नयी बात, नया ख़याल ज़बर्दस्ती हमारी क़िलेबन्दी तोड़-कर भीतर घुस भी आया तो हमने उसे कौतूहल की चीज़ समझा, अचंभे से देखा और फिर चादर से मुँह ढ़ाँप लिया।

पानीपत की पहली लड़ाई में बाबर के सिपाहियों ने यह साबित कर दिया था कि बारूद और बन्दूक़ के आगे तीर और तलवार बेकार हैं। लेकिन हिन्दुस्तान के सिपाहियों ने उसे अपनाने की बात नहीं सोची। समुद्री किनारों को हमने बड़ा ज़बर्दस्त पहरेदार माना। इसलिए समुद्री बेड़ा वग़ैरह बनाने की बात हमने बहुत पीछे सोची। सोचकर भी उस पर कोई अमली काम नहीं किया। बड़े से बड़े दुश्मन का मुक़ाबला करने के वास्ते भी यहाँ की

छोटी-छोटी रियासतों ने यह महसूस नहीं किया कि उन्हें मिलकर उसका मुक़ाबला करना चाहिए।

हैदर जब मामूली हवलदार था—तभी उसने देखा कि फ्रांसीसी और अंग्रेज़ सिपाही नये ढ़ंग से लड़ते हैं, उनका संगठन अच्छा है, उनकी क़वायद फ़ायदे की चीज़ है, उनकी बन्दूकें और तोपें ला-जवाब हैं, उसी समय उसने ताड़ लिया कि बिना इसको अपनाये हम इनका मुक़ाबला नहीं कर सकते। उसने वैसा ही किया। तोपें ढ़लवायीं, नये ढंग से फ़ौज़ को क़वायद सिखायी। मगर एक हैदर के करने से क्या हो सकता था? लोग तो नयी चीज़ें चाहने या सीखने के आदी थे नहीं।

जब अंग्रेज़ों ने इस धरती पर क़दम रखा तभी उन्होंने भाँप लिया कि 'फूट डालकर राज' (Divide and rule) वाली नीति यहाँ ख़ूब सफल होगी। फिर उन्होंने इसका प्रयोग शुरू किया और करते जा रहे हैं—धड़ल्ले के साथ। इसमें उन्हें बराबर कामयाबी मिलती रही है। फिर वे क्यों छोड़ें? मराठे बहुत होशियार राजनीतिज्ञ थे, फिर भी वे इस जाल से बच न सके। उन्होंने अंग्रेज़ों को अपने हाथ का खिलौना बनाना चाहा, मगर ख़ुद उनके हाथ की कठपुतली बनकर ख़तम हो गये। मुसलमान नवाब भी इस

से बाज़ नहीं आये। हम मुहम्मद अली और निज़ाम की हालत पहले देख चुके हैं। अगर उस समय अंग्रेज़ों की यह नीति काम न कर पाती तो हैदर अली की जीवनी इतने कम सफ़ों में नहीं लिखी जा सकती थी।

हैदर की सबसे बड़ी कमज़ोरी थी उसकी फ़ौज का ढीलापन। जैसा हम पहले कह चुके हैं कि अपने लोग नयी बातें तो जल्दी अपनाना नहीं चाहते। मगर हैदर को अंग्रेज़ों का मुक़ाबला करने के वास्ते उस ढंग की सेना भी रखनी थी। हिन्दुस्तानी लोग उस काम के लायक़ थे नहीं। इसलिए लाचार होकर उसे फ्रांसीसियों की मदद लेनी पड़ी। उसे उन पर भरोसा करना पड़ा। उसकी सेना में—गोला, बारूद, तोप, तोपची, सेनापति और कुछ सिपाही भी फ्रांसीसी थे। फ्रांसीसी तोप और बन्दूक़ के कारख़ानों के अधिकारी भी थे। उस समय अंग्रेज़ और फ्रांसीसी आपस में दुश्मन थे, इसलिए यह ठीक था; मगर हमेशा के लिए यह इन्तज़ाम ख़तरे की जगह था। क्योंकि फ्रांसीसी भी हिन्दुस्तान पर हुकूमत चाहते थे। बल्कि यों कहना चाहिए कि पहले-पहल यहाँ साम्राज्य-विस्तार करने की बात डूप्ले के दिमाग़ में ही आयी। बात हुई भी वैसी ही। जब इन दोनों जातियों के आपसी झगड़े यूरोप में

ख़तम हो गये तो यहाँ भी फ्रांसीसियों ने टीपू को मदद देना बंद कर दिया। मराठे भी सालबाई की सन्धि से बंध चुके थे। टीपू अकेला रह गया। उसके घर में भी काफ़ी दुश्मन थे। नतीजा यह हुआ कि अंग्रेज़ों को मौक़ा मिला और हैदर का सपना सदा के लिए आँखों से ओझल हो गया। दक्खिन पर अंग्रेज़ों का कब्ज़ा मज़बूत हो गया।

हैदर एक मामूली आदमी के घर पैदा हुआ और मामूली समाज में पला था, इसलिए ही वह मामूली आदमी की ख़्वाहिशों को जानता था। जनता का—रिआया का सच्चा दुख समझता था। उसने देखा कि यह राजा, महाराजा, राव, पेशवा, नवाब, सूबेदार—जनता की तकलीफ़ें नहीं समझते हैं। 'अपनी अपनी डफ़ली और अपने अपने राग' में लगे हुए हैं। अपनी झूठी शान और आन निभाने के लिए ख़ून की नदियाँ बहाया करते हैं। संधियाँ तोड़ते और लिखते रहते हैं। उसने उस ऊँचे पद पर जाकर भी उन लोगों की नक़ल नहीं की। वह गद्दी पर बैठने को काम नहीं मानता था। वह अपने सिपाहियों के साथ ज्वार और बाजरे की रोटी खाता था। इसलिये ही उसने जिस ख़ूबी से आनेवाली आफ़त को देखा दूसरे न देख सके।

वह हिन्दुस्तान की कमज़ोरियों को समझता था। उसने उन कमज़ोरियों को दूर करने की मक़दूर भर कोशिश की। मगर कामयाब न हो सका। हिन्दुस्तान की ग़ुलामी की ज़ंजीरों को उसने बनते हुए देख लिया था, उसकी भयंकरता का अंदाज़ा लगा लिया था। उन ज़ंजीरों को तोड़ देने की उसने कोशिश की। मगर कामयाबी न मिल सकी। उसके मरने के बाद तो ग़ुलामी का वह शिकंजा और भी तेज़ी से हमारे ऊपर कसने लगा। फिर भी कुछ बहादुरों ने उसे तोड़ने की कोशिश की; मगर असफल रहे।

हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई जिसे नाना फड़नवीस और हैदर अलीने शुरू किया था जिसे नानासाहब धुन्धपन्त, तांतियातोपी और झांसीवाली रानी लक्ष्मी बाई आदि लड़े थे, उसे महात्मा गान्धी ने अंहिसामय सत्याग्रह की लड़ाई से पूरा किया—जिस ग़ुलामी की नींव सन् १७५७ में प्लासी की लड़ाई से पड़ी उसका अन्त १९४७ अगस्त १५ को हुआ।

कठिन शब्दार्थ

पृ० १. इक़बाल - प्रताप, भाग्य
बुलन्द - ऊँचा
गुस्ताख़ी - बे-अदबी, अशिष्टता
सरीखे - समान, ऐसे
निकम्मा - बेकार
निहत्था - असहाय
दग़ाबाज़ - छली, धोखेबाज़
२. फ़य्याज़ी - उदारता, दानशीलता
बदला देना - उपकार मानना
बादशाही - हुकूमत
तबाह करना - बरबाद करना
सफ़ेद साँप - दग़ाबाज़
राजनीति - वह नीति जिस के आधार पर राजा राज करता है।
सभ्यता - सभ्य लोगों का आचार
हिमाक़त - मूर्खता
चंद - कुछ
ज़ालिमाना - कठोर
सलूक़ - व्यवहार
सफ़ेद झंडा फहराना - हार मानना
बेरहमी - निर्दयता
क़त्ल करना - जान से मार डालना
रोंगटे खडे होना - अचंभित होना, हैरान होना
गुनाह - पाप
३. हक़दार - अधिकारी
इरादा - निश्चय
बदमाशी - शरारत
बाज़ू - बगल
ईमानदारी - नेकनीयती
इतमीनान - विश्वास
इंजील - बाइबल
कसम खाना - शपथ खाना, प्रतिज्ञा करना
आयन्दा - भविष्य में
दस्तन्दाज़ी - हस्तक्षेप
क़ासिद - दूत
बा-हिफ़ाज़त - सुरक्षित
४. रसद - खाने पीने का सामान
निज - अपना
मशहूर - प्रसिद्ध
मुँह का छीनना - रोजी मारना, सताना
गुज़ारिश करना - प्रार्थना करना
साबित करना - प्रमाणित करना,
हाज़िर-नाज़िर मानना - मौजूद मानना
५. मुहाल - मुश्किल, कठिन

राज़ी-बाज़ी - मेल-जोल

फेहरिस्त - सूची

६. सिपहसालार - सेनापति

ख़िदमत - सेवा

आदाब अर्ज़ - नमस्कार

तिजारत - व्यापार

बुज़दिल - डरपोक

दीबाचा - भूमिका

साहबज़ादा - राजकुमार

७. मज़बूत - हृष्ट-पुष्ट

दरख़्त - पेड़

सुपुर्द करना - सौंपना

अज़ीज़ - प्रिय, प्यारा

दस्तरख़ान - वह कपड़ा जिस पर खाना रखकर खाते हैं।

रिकाब - घोड़ों की काठी का पावदान जिससे बैठने में सहारा लेते हैं।

बन्दा - सेवक

मातहती - देखरेख, अधिकार

८. रिश्वत - घूस

जवाँमर्दी - वीरता

दानाई - अक़्लमन्दी

क़त्ले आम - सर्व साधारण का वध

फज़ल - दया

बद-नसीबी - दुर्भाग्य

हिक़मत - तदबीर, युक्ति

खुदगर्ज़ - स्वार्थी

दम में दम रहना - जीते जी

पैर जमने न देना - रहने न देना

कुर्बान करना - अर्पण करना

मशविरा - सलाह

९. आरज़ू - प्रार्थना

शामियाना - तंबू, खेमा

मसनद - गद्दी

मझोला - मध्यम श्रेणी का

साफ़ा - पगड़ी

कलग़ी - शुतुर मुर्ग आदि चिड़ियों के सुन्दर पंख जिन्हें पगड़ी या ताज पर लगाते हैं

मुआफ़िक - मुताबिक

१०. रविशें - रास्ते

फुर्ती - तेज़ी

ग़ैरमुमकिन - असंभव

दाँव-पेंच - Policy, कूटनीति

११. लाज रखना - इज़्ज़त बचाना

दिल कच्चा पड़ना - हिम्मत हार जाना

रुकावट - बाधा

तसल्ली - सान्त्वना, दिलासा

बेफ़िक्र - निश्चिन्त

ज़रखेज़ - उपजाऊ

ग़ैर - पराया, अन्य

१२. औलाद - सन्तान
ख़ासियत - विशेषता
औलिया - महात्मा, सन्त
पैदाइश - जन्म
आध्यात्मिक शक्ति - आत्मबल
आदान-प्रदान - विनिमय, लेन-देन
१३. संकीर्णता - ओछापन, क्षुद्रता
गंगा-जमुनी संस्करण - संगम, मेल
अफ़सोस - खेद
सहिष्णुता - सहनशीलता
परवरिश - रक्षा
अदूरदर्शिता - दूर की बात
न सोचना, ना-समझी
स्वार्थपरता - खुदगर्ज़ी
ऐलान - घोषणा
नाचीज़ - बेकार
बढ़नी - झाड़ू
सींकें - तीली, सलाई
१४. अगुआ - नेता
गुल होना - बुझ जाना
दम तोड़ना - मरना
तवारीख़ - इतिहास
दरगाह - मस्जिद
१५. फ़क़ीराना मिज़ाज़ - संतों का [स्वभाव
ख़ानदान - वंश
खुदातर्स - दयालु
परहेज़गार - संयमी
दुनियावी - दुनिया की
चंद रोज़ा - थोड़े दिनों का
पाकीज़गी - पवित्रता
१६. पेशीनगोई - भविष्यवाणी
यक़ीन - विश्वास
तख़्तनशीन हुआ - सिंहासन पर बैठा
ख़ैरख़्वाह - हितैषी
१७. करारी - बुरी तरह, सख़्त
वारिस - उत्तराधिकारी
१८. हैसियत - पद
टक्कर लेना - मोर्चा लेना
युद्धचातुरी - लड़ाई करने की निपुणता
धूम मचना - हलचल पैदा होना
बनिस्वत - अपेक्षा
अमल में लाना - काम में लाना, [उपयोग करना
चौथ - टैक्स, आमदनी का एक चौथा हिस्सा जो कर के रूप में लिया जाता है
परदानशीन - परदे में रहनेवाला
हक़ - अधिकार
१९. साजिश - षड़यन्त्र
बर्दाश्त - सहन
शोहरत - प्रसिद्धि

अंदरूनी - भीतरी
तवज्जह - ध्यान
मुकर्रर - नियुक्त
२०. जालसाज़ - दग़ाबाज़
दबदबा - प्रभाव
२१. वाक़फ़ियत - परिचय
हावी होना - लागू होना, प्रभाव में [आना
खुदगर्ज़ी - स्वार्थपरता
दुश्वार - कठिन
चकमा - भुलावा, धोखा
हाकिम - ऊँचे अफ़सर
२२. वफ़ादार - कर्तव्य-पालक, [विश्वस्त
नायब - सहायक
चंगुल में फँसना - किसी के काबू में [होना
मसला - समस्या
अख्तियार करना - अनुसरण करना
कामयाब होना - सफल होना
२३. काश्तकारी - खेती
पैमाइश - खेत की नाप
२४. गोकुशी - गोवध
कतई - बिलकुल
शौक़ीन - विलासी
पारखी - सूक्ष्मदर्शी

अस्तबल - घुड़साल
क़दर - इज़्ज़त
निशाने बाज़ - निशान लगाने में [निपुण
कनपटी - कान और आँख के बीच [का स्थान
ख़ातमा - समाप्ति, अंत
२६. छका देना - तंग करना
ख़िराज़ - टैक्स, कर
नीयत - मंशा
दूरन्देश - दूर की सोचनेवाला
३०. तसबीह - माला
सख़्त - कठोर
चोब - सोने या चाँदी से मढ़ा हुआ डंडा
चँवर - एक तरह की कलँगी, सुरागाय की पूँछ के बालों का गुच्छा
३१. आँख मारी जाना - अन्धा हो [जाना
टहल उठाना - सेवा करना
संकल्प - निश्चय
दख़ल देना - हस्तक्षेप करना
३२. मुलाज़िम - नौकर
अमलदारी - अधिकार
अमले - अधिकारी
लापर्वाही - बेफ़िक्री
अहकाम - आज्ञाएँ (हुक्म का ब०)

३२. मुफ़लिस - ग़रीब
पिठ्ठू बनना - ख़ुशामदी बनना
कसूरवार - अपराधी
मुँह लाल होना - गुस्से में आना
असानत में ख़यानत - किसी की धरोहर बेईमानी से अपने काम में लाना
ताबेदार - सेवक, दास
३४. फ़र्ज़ंद - सन्तान, बेटा
बतौर - उसकी तरह
वाक़या - घटना, स्थिति
हरकारा - चिट्टीरसाँ, पत्रवाहक
३५. हर अज़्ो - प्रत्येक हिस्सा
लाग़र - कमज़ोर, पतला
बेवा - विधवा
३७. दो जानू हो - घुटने टेककर
नमक-हराम - कृतघ्न
सल्तनत - शासन, हुकूमत
यतीम - अनाथ
३८. अदा करना - वापस देना, चुकाना
४०. बड़बड़ाया करना - अंटसंट बकना
तैश - गुस्सा
मुब्तला - फँसा हुआ
नायाब हस्ती - बेशक़ीमत, अनमोल
वालिद - बाप
फ़ख्र - गौरव

४१. मर्ज़ - रोग
दीने-इलाही - एक धर्म जिसे अकबर बादशाह ने चलाया था, ईश्वरीय धर्म
फ़िक्रमंद - चिन्तित
४३. हुनर - कला
आसार - चिह्न
फ़रमान - हुक्म, आज्ञा
४४. फरमाइश - माँग
४५. खतो-किताबत - पत्र-व्यवहार
शुक्र-गुज़ार - कृतज्ञ
बाइस - कारण
अदना - मामूली
क़तरा - बूँद
अरमान - तमन्ना, इच्छा
४६. ख़्वाहिश - इच्छा
ख़ातिरदारी - सेवा, देख-भाल
४९. मोहासरा - घेरा
खून-ख़राबी - मारकाट
खेत रहना - मर जाना
हस्ब-दस्तूर - रीति के अनुसार
हाथ लगाना - शुरू करना
ज़िम्मेदारी - उत्तरदायित्व
महकमा - विभाग
५०. नाजायज़ - अनुचित
प्राकृतिक - क़ुदरती

प्रतिद्वन्द्वी - विरोधी
५१. दिलोजान - तनमन से
घुटने टेकना - मिन्नत करना
बोलबाला - दबदबा
कूटनीति - राजनीतिक चालबाजी
मुँह की खाना - हार जाना
५२. बोरिया-बँधना उठाना - विदा [लेना
बौखला जाना - पागल हो जाना
परेशान हो जाना,
तबाही - बर्बादी
दस्तकारी - हाथ की कारीगरी
आफ़त ढाना - जुल्म करना
५३. बुर्ज़ - गुम्बद
५४. फ़सील - किले की बड़ी दीवार
५५. मन्सूबे - उमंग, मनोरथ
गुल हो जाना - बुझ जाना
५६. दिल बैठ जाना - हिम्मत टूट जाना
बारे आम - सर्वसाधारण
५७. मक़बरा - समाधि
पस्त - हारा हुआ
५८. नातजुर्बेकार - अनुभवहीन
दायरा - सीमा
महसूस - अनुभव

सिरताज - मुकुट
५९. अत्युक्ति - हद दर्जे की त
६०. नाकामयाबी - असफलता
अहमियत - महत्व
काले कारनामे - बुरे काम
अनगिनत - असंख्य
तादाद - संख्या
आगा-पीछा करना - कुछ न तय क
मीन मेख निकालना
६१. मुख़ालिफ़त - विरोध
पानी फेर देना - निराश कर देना
दलदल - कीचड़
रफ़्तार - गति
घुड़दौड़ - रेस (Race)
फिसड्डी - गँवार, पिछड़ा हु
६२. फ़ालतू - बेकार
करार देना - निश्चय करना
क़िलेबन्दी - मोर्चेबन्दी
६४. आदी - अभ्यस्त
बाज़ आना - हट जाना, दूर हो
सफ़ा - पेज
अपनी अपनी डफ़ली / अपना अपना राग } -मनमानी
मक़दूर - ताक़त
शिकंजा - फंदा

450
290
160
हरिद्वार